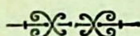
7-8

सर्वतोभद्रचक्रम्

ज्योतिष

ॐ

भूमिका



सर्व विद्वान् व अविद्वान् इस बात को निस्संदेह स्वीकार करते हैं कि विद्या के जैसे और अंश हैं वैसा ज्योतिःशास्त्र भी एक अंश है। इस विषय में कई एक विज्ञानवान् जो ज्योतिष के गणित अंश में रमे हैं वह गणित को प्रधान मानते हैं, अन्य फलादेश को अप्रधान व असत्य मानते हैं; परन्तु जो दैवज्ञ फलादेश में रमे हैं वह फलादेश को प्रधान और गणित को उसका उपयोगी साधन व अप्रधान मानते हैं, क्योंकि गणित के द्वारा तो प्रत्यक्ष के पदार्थों का ही ज्ञान होता है, किन्तु फलित के द्वारा परोक्ष के पदार्थों का भी ज्ञान हो जाता है। पर इस समय गणित के माननेवाले जैसे गणित के अंश को निर्विवाद सिद्ध कर दिखाते हैं, ऐसे फलित अंश को साङ्गोपाङ्ग दिखलानेवाले बहुत थोड़े विद्वान् मिलते हैं, जिसका कारण यह है कि इस देश के अभाग्य से आधुनिक विद्वानों ने ज्योतिष का मुख्य तत्त्व जो गुरुपरंपरा से प्राप्त होने योग्य था सो अपने पुत्र तक को नहीं बतलाया, तथा इस विद्या के विद्वानों को राजा महाराजाओं से आश्रय नहीं मिलने से उन्होंने भी उस तत्त्व को ग्रहण करने में श्रद्धा से परिश्रम करना छोड़ दिया इसी से इस समय के ज्योतिषियों की कही हुई फलादेश की विधि यथावत् नहीं मिलती है इससे उसमें सर्वदा लोग मूर्च्छित रहते हैं और कह देते हैं कि यह अंश झूठा है। विचार का स्थल है कि जिस तत्त्व को बड़े-बड़े ऋषि महर्षियों

ने कहा है तथा जिसके द्वारा पर्वाचार्य सम्पूर्ण जगत् का भावीफल (अर्थात् शुभ-अशुभ, लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन-मरण, यश-अपयश, राजाओं के परस्पर शांति-युद्ध, संधि-विग्रह, जय-पराजय, वृष्टि-अनावृष्टि, सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, समर्घ (मन्दी), महर्घ (तेजी) कौन से देश में, कौन से प्रान्त में, कौन से नगर में तथा कौन से वर्ष में, कौन से मास में, कौन से दिन में, किस वस्तु की अर्थात् धातु में सुवर्ण, रूपा, ताँबा आदि। जीव में—हाथी, घोड़ा, गाय, बैल, घृत, कस्तूरी आदि। मूल में—अफीम, कपास, रुई, धान्य, तेल, गुड़ादि की कितनी कितनी मन्दी और कितनी कितनी तेजी किस प्रकार से होवेगी इत्यादि अनेक विषयों का निर्णय करके पहिले से कह देते थे, इसी से वे लोग दैव की गति को जाननेवाले दैवज्ञ कहलाते थे। और, इस समय भी इसकी सत्यता के अनेक उदाहरण मिलते हैं, जैसे सं० १९५६ के वर्ष में ७ ग्रहों के योग का फल पहिले से विद्वानों ने प्रकाशित किया था वैसा ही सबको अनुभव हो गया तथा प्रत्यक्ष में भी देखने में आता है कि जो लोग इसको नहीं मानते उनको भी समय पड़ने पर इसका आश्रय लेना ही पड़ता है। फिर सहसा (हठ से) इसको झूठ बतलाना कैसी भूल है! अतः जो लोग ज्योतिषशास्त्र के फलित के लिये खिन्न व संशययुक्त हैं उन भाइयों के लिये आज हम ज्योतिष के फलित की सत्यता दिखलाने को छोटासा चुटकुला जो आश्चर्यरूप ज्योतिषशास्त्र के गौरव को प्रकट करता है उस सर्वतोभद्रचक्र को जो त्रैलोक्यदीपक नाम से प्रसिद्ध है और यथार्थ में अपने नाम के अनुकूल तीनों लोकों के गूढ़ विषयों को जतलाने के लिये दीपक ही प्रकट करते हैं उस सर्वतोभद्रचक्र को श्रीशिवजी ने ब्रह्मयामलग्रन्थ में वर्णन किया है, उसके सारांश को पं० नरपति ने अपने बनाये हुए 'नरपति-जयचर्या' नामक

ग्रन्थ में कहा है उसमें के तो सम्पूर्ण श्लोक तथा उसके अर्थ को स्पष्ट करनेवाले अन्य ग्रन्थों के श्लोक मैंने जो गुरुमुख से श्रवण करे उनमें से पाठकों के लाभदायक हों उतने सारभूत उपयोगी श्लोक सरल आर्यभाषा में विवरण करके दिखाये हैं, जिससे ज्योतिष के चमत्कार का नमूना मालूम होगा और अनुभव करने से प्रतीत होगा कि ज्योतिषशास्त्र उन पदार्थों को हस्तामलकवत् प्रकाशित करता है जो परोक्ष में हुए हों। इस सर्वतोभद्रचक्र के तत्त्व को पूरा लिखना महाकठिन है, तो भी जितना कलम से प्रकाश किया जा सकता है उतना मेरी बुद्धि के अनुसार प्रकाश किया है। आशा है कि इतने को भी श्रद्धावान् विचारेंगे तो बहुत तत्त्व पावेंगे।

आप लोगों को यह भी ज्ञात हो कि हमारे पूर्वजों की तथा हमारी भी जीविका ज्योतिष आदि से नहीं है; किन्तु व्यापार आदि से है। तथापि हमारे घर में परमार्थ से ज्योतिष और वैद्यक विद्या का अभ्यास पहिले से चला आता है तदनुसार हमारे लघुभ्राता पूर्णचन्द्र ने तो आयुर्वेद में अधिक श्रम करके उसमें अपनी योग्यता प्राप्त की और मेरा पूर्ण प्रेम ज्योतिष विद्या पर होने से ज्योतिष के प्राचीन शास्त्रों का सारभूत एक ग्रन्थ मैंने संग्रह किया है जिसका नाम 'बृहदर्घमार्तंड' रक्खा है। उसमें अनुमानतः १० सहस्र से अधिक श्लोक होंगे जिसके नमूने में यह सर्वतोभद्रचक्र एक अंक आप लोगों के दृष्टिगोचर करने में आता है। सो ईशकृपा से लोकप्रिय हो जाय और आप लोगों की इच्छा उस महान् ग्रन्थ को देखने की हो तो उसके दूसरे भी अंक यथावकाश क्रम-क्रम से प्रकाश करने की आर्यलोगों की सेवा करने में मैं तत्पर हूँ।

इस ग्रन्थ की भाषा आदि के शोधने में हमारे परमप्रिय श्रीमान्

महता चिमनसिंहजी आदि जिन महाशयों ने सहायता दी है उन सबको मैं धन्यवाद देता हूँ।

प्राचीन ज्योतिःशास्त्रश्रमी
पंडित मीठालाल व्यास
पाली—मारवाड़।

सं० १९९०
मृगशिर वदि १

(ज्योतिष की शतरंज का खेल)

अर्थात्

सर्वतोभद्रचक्र में वेध देखने की सरल युक्ति ।

जैसे युद्धादि का कल्पित हाल जानने के लिये विद्वानों ने खेल की शतरंज रची है वैसे ही सम्पूर्ण जगत् का सच्चा हाल जानने के लिये त्रिकालदर्शी महर्षियों में आकाशस्थ तारामण्डल के अनुसार ८१ कोठों की ज्योतिष की शतरंज रची है। खेल की शतरंज में तो बादशाह को वजीर, हाथी, घोड़ा, ऊँट और प्यादों की गति (चाल) के अनुसार वेध (किस्त) आने से हार जीत होती है, परन्तु इस ज्योतिष की शतरंज में ३३ अक्षर, १६ स्वर, १५ तिथि, ७ वार, २८ नक्षत्र और १२ राशियों को सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि और राहु तथा केतु की गति (चाल) वश से दृष्टि के अनुसार वेध (किस्त) आने से उन अक्षरादि के नामवालों का हानि-वृद्धि होती है।

इस शतरंजरूपी चक्र में सूर्यादि ग्रहों का वेध तथा फल जानने के लिये सम्पूर्ण विधि इस पुस्तक में बहुत विस्तार से लिखी है, तथापि सर्वसाधारण को भी विना गुरु के वेधज्ञान का स्पष्ट बोध हो जाने के लिये वेध देखने की सरल युक्ति उदाहरण रूप यहाँ पर लिख देता हूँ।

(१) पुस्तक में लिखे अनुसार चक्र को काग़ज़ आदि के मोटे तखते पर लिख लें।

(२) चक्र में अक्षर, स्वर, तिथि, नक्षत्र और राशियाँ—पाँच हैं। अतः इनकी ५ कल्पित मूर्तियाँ काष्ठादि की शतरंज के प्यादे जैसी बना लें।

(३) सूर्यादि नव ग्रहों की भी ९ मूर्तियाँ काष्ठादि की शतरंज के वजीर जैसी बना लें और पहिचानने के लिये उनको जुदे-

जुदे रंगों से रंग लें; अर्थात् सूर्य को लाल, चन्द्र का श्वेत और शिर पर कुछ कृष्ण, मंगल को गहरा लाल व गुलाबी, बुध को हरा, बृहस्पति को पीला, शुक्र को श्वेत, शनि को कृष्ण, राहु को आसमानी और केतु को बैंगनी रंग लें।

(४) मनुष्य, पशु, पक्षी, देश, ग्राम आदि में से जिस किसी का शुभाशुभ देखना हो अथवा खरीदने बेचने की सम्पूर्ण वस्तुओं में से जिस किसी वस्तु की हानि-वृद्धि (तेजी मन्दी) देखनी हो उसका जन्मनाम विदित हो तब तो जन्मनाम का, नहीं तो प्रसिद्ध नाम का प्रथम अक्षर, उस अक्षर का जो नक्षत्र हो वह नक्षत्र, तथा जो राशि हो वह राशि और पुस्तक में लिखे हुए स्वरवर्णचक्र में अकारादि पाँच स्वरों में से उस अक्षर का जो स्वर हो वह स्वर तथा वर्ण, तिथि चक्र में नन्दादि पाँच तिथियों में से उस अक्षर की जो तिथि हो वह तिथि—ये पाँचों सर्वतोभद्रचक्र में जिन कोठों में लिखे हों उन पाँच कोठों में अक्षरादि की ५ कल्पित मूर्तियाँ रख दें। ऐसी मूर्तियाँ रखने से फिर इन्हीं पांच कोठों पर किसी ग्रह का वेध है व नहीं सो यह स्पष्ट देखने में आ जावेगा।

(५) वेध देखने के समय सूर्यादि ग्रह पञ्चाङ्ग में जिस-जिस नक्षत्र पर हों इस चक्र में भी उसी-उसी नक्षत्र पर ग्रहों की कल्पित मूर्तियाँ रख दें। ऐसी मूर्तियाँ रखने से उस नक्षत्र स्थान से किस ग्रह का किस ओर के अक्षरादि को वेध है और किस ओर के अक्षरादि को वेध नहीं है सो बहुत स्पष्ट जाना जा सकेगा।

(६) जिस नक्षत्र पर ग्रह रक्खा हो उस नक्षत्र स्थान से तीन ओर को वेध होता है, परन्तु मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि—ये पाँच ग्रह कभी वक्री कभी शीघ्रगामी और कभी मध्यचारी होते हैं; अतः वेध देखने के समय इन ५ में से जो ग्रह वक्री होगा

उसका तो वेध दाहिनी ओर को, जो ग्रह शीघ्रगामी होगा उसका वेध बाईं ओर को और जो ग्रह मध्यगामी होगा उसका वेध सामने को होगा।

(७) राहु तथा केतु सदा ही वक्री और सूर्य तथा चन्द्र सदा ही शीघ्रगामी होने से इन ४ ग्रहों का वेध सदा तीनों ही ओर को एकसा होता है।

(८) दाहिनी ओर के वेध से तथा बाईं ओर के वेध से तो जो अक्षरादि वेध की सीध में (लाइन में) आवेंगे उन सभी को वेध हो जाता है, परन्तु सामने के वेध से केवल सामने के एक नक्षत्र को ही वेध होता है अर्थात् बीच में के किसी अक्षरादि को वेध नहीं होता।

(९) मनुष्यादि में से जिसके अक्षरादि को शुभ ग्रह का वेध होगा उसको शुभ फल और जिसके अक्षरादि को अशुभ ग्रह का वेध होगा उसको अशुभ फल होगा। ऐसे ही खरीदने वेचने की वस्तुओं में से जिसके अक्षरादि को शुभ ग्रह का वेध होगा उसकी वृद्धि तथा भाव भी मन्दा और जिसके अक्षरादि को अशुभ ग्रह का वेध होगा उसकी हानि तथा भाव भी तेज हो जावेगा।

(१०) चन्द्र, बुध, बृहस्पति और शुक्र ये ४ ग्रह शुभ और सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु—ये ५ ग्रह अशुभ हैं परन्तु चन्द्रमा तो क्षीण हो जाने से और बुध अशुभ ग्रह के साथ होने से—यह दो शुभ ग्रह भी अशुभ हो जाते हैं।

हमारे यहाँ से ग्रन्थ प्रकाशित करने का कारण।

इस साम्प्रतकाल में विना द्रव्य के मनुष्यों का जीना ही वृथा सा हो गया है। और द्रव्य-प्राप्ति का मुख्य साधन एक व्यापार ही होने से भूमण्डल भर के सभी लोग व्यापार में लगकर एक दूसरे से चढ़ाबढ़ी कर रहे हैं। परन्तु व्यापार विना भविष्य अर्घ्यज्ञान के पूर्ण लाभदायक नहीं हो सकता; क्योंकि केवल मनुष्यों की तर्क बुद्धि के

आधार पर किया हुआ विचार तभी तक ठीक निकलता है कि कोई दैवी कारणों की बाधा बीच में न आ पड़े।

यद्यपि महर्षियों ने भविष्य अर्घ्यज्ञान के कई उपाय बतलाये थे, परन्तु पहिले समय में व्यापार की इतनी वृद्धि नहीं हुई थी इसलिये व्यापारियों के उपयोगी सम्पूर्ण वस्तुओं की तेजी मन्दी बतलाने के लिये कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं रचा गया था परन्तु इस समय में ऐसे ग्रन्थ की अत्यन्त आवश्यकता देखकर मैंने कई वर्षों के अत्यन्त परिश्रम द्वारा अनेक प्राचीन ग्रन्थों का साररूप 'बृहदर्घ्यमार्तण्ड' नामक एक महान् ग्रन्थ का संग्रह करके सर्वसाधारण को लाभ पहुँचाने के लिये सरल हिन्दी भाषाटीका सहित उस ग्रन्थ को अंक-अंकरूप से प्रकाशित करना प्रारंभ कर दिया है। उनमें यह 'सर्वतोभद्रचक्र' पहिला अंक है। इसी प्रकार वृष्टिप्रवोध, भारत का वायुशास्त्र, संक्रान्तिप्रकाश, ग्रहणफलदर्पण आदि अंक प्रकाशित हो चुके और संवत्सर-सुवोध आदि प्रेस में छप रहे हैं। और, शेष अंक भी यथावकाश शीघ्र प्रकाशित किये जावेंगे। आशा है कि जिस समय यह सम्पूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित होकर पाठकों की सेवा में पहुँच जावेगा तब फिर भविष्य अर्घ्यज्ञान के लिये अन्य किसी भी पुस्तक के देखने की कुछ भी आवश्यकता न रहेगी; क्योंकि अर्घ्यज्ञान के उपयोगी प्रायः सम्पूर्ण अलभ्य विषय भी इस ग्रन्थ में एकत्र कर दिये गये हैं।

पाठकों को विदित हो कि हमारे यहाँ की प्रकाशित की हुई बहुधा पुस्तकों को पुनः प्रकाशित करने का स्वत्व (हक़) हमारे परम प्रिय श्रीमान् पं० व्रजवल्लभ हरिप्रसादजी को अर्पण कर दिया है। इससे अब यह पुस्तकें वारम्वार प्रकाशित होकर शीघ्र शीघ्र ग्राहकों की इच्छा पूर्ण कर सकेंगी।

सर्वतोभद्रचक्रम् ।

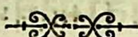
ईशान कोण — पूर्वदिशा — अग्नि कोण

अ	कृ	रो	मृ	आ	पु	पु	अ	आ
भ	नु	अ	व	क	ह	ड	ऊ	म
अं	ल	लृ	वृष	मिथुन	कर्क	लॄ	म	पू
रे	च	मेष	आ	नंदा १।६।११ सू. मं.	औ	सिंह	ट	न
नु	द	मीन	रिक्ता ४।९।१४ शु.	पूर्णा ५।१०।१५ शनि	भद्रा २।७।१२ बु. चं.	कन्या	प	ह
पू	स	कुंभ	अः	जया ३।८।१३ गु.	अं	तुला	र	चि
श	ग	ऐ	मकर	धन	वृश्चिक	ए	त	स्वा
ध	ऋ	ख	ज	भ	य	न	अ	वि
ई	श्र	अ	नु	पू	मू	ज्ये	अ	इ

उत्तर दिशा — दक्षिण दिशा

वायव्य कोण — पश्चिम दिशा — नैऋत्य कोण

अनुक्रमणिका





सर्वतोभद्रचक्रम् ।



भाषाविवृतिव्याख्यासहितम् ।

ब्रह्मेशविष्णूंश्च महर्षिसंघान्
संदर्शिनोऽगम्यनिमित्तशास्त्रान् ।
श्रीमन्महारामसुनामधेया—
नन्यान्समग्रांश्च गुरून्नमामि ॥ १ ॥
चालचक्रं ग्रहाणां यत् कथितं कालनिर्णये ।
यस्य विज्ञानमात्रेण स्फुटं भवति सर्वशः ॥ २ ॥
तदिदं सर्वतोभद्रचक्रं त्रैलोक्यदीपकम् ।
भाषया विशदीकुर्वे हिताय जगतोऽधुना ॥ ३ ॥
सरलां वृत्तिमास्थाय समाधाय च मानसम् ।
मीठालालः सुधीर्व्यासो ज्योतिश्शास्त्रकृतोद्यमः ॥ ४ ॥

चक्रनिर्माणप्रकरणम् ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि चक्रं त्रैलोक्यदीपकम् ।
विख्यातं सर्वतोभद्रं सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ १ ॥

पंचस्वराध्याय में हंसचार कहने के उपरान्त तीनों लोकों (स्वर्ग, मृत्यु, पाताल) को दीपक के समान प्रकाश करनेवाले और तत्काल विश्वास करानेवाले चक्र को—जो सर्वतोभद्रनाम से प्रसिद्ध है, सो—मैं सम्यक् विस्तार से कहूँगा ॥ १ ॥

त्रिविधं सर्वतोभद्रं खण्डाखण्डोभयात्मकम् ।
चतुःषष्टिपदं खण्डमेकाशीतिमखण्डकम् ॥ २ ॥
शंकुवर्गपदं चक्रं खण्डाखण्डोभयात्मकम् ।
तन्मध्येऽखण्डचक्रस्यविधानं क्रियतेऽधुना ॥ ३ ॥

खंड, अखंड और उभयात्मक नाम से सर्वतोभद्रचक्र तीन प्रकार का है। उनमें ६४ कोठों का चक्र खंड, ८१ कोठों का चक्र अखंड और १४४ कोठों का चक्र खंड तथा अखंड दोनों प्रकार का माना है। तिनमें प्रथम ८१ कोठों के अखंड चक्र का विधान इस ग्रन्थ में करते हैं ॥ २-३ ॥

ऊर्ध्वगा दश विन्यस्य तिर्यग्रेखास्तथा दश ।
एकाशीतिपदं चक्रं जायते नात्र संशयः ॥ ४ ॥

१० रेखा खड़ी और १० रेखा आड़ी खींचने से ८१ कोठों का चक्र सिद्ध होता है ॥ ४ ॥

अकारादिस्वराः कोष्ठे ईशादौ विदिशि क्रमात् ।
सृष्टिमार्गेण दातव्याः षोडशैवं चतुर्भ्रमम् ॥ ५ ॥

ईशानादि चारों कोणदिशाओं के (१६) कोठों में अकारादि १६ स्वर सीधे क्रम से एक एक करके चार फेरे में लिखै। ऐसे लिखने से अ, उ, लृ, ओ ये ४ ईशान में; आ, ऊ, लॄ, औ ये ४ अग्नि में; इ, ऋ, ए, अं ये ४ नैर्ऋत्य में और ई, ॠ, ऐ, अः ये ४ वायव्य में लिखे जावेंगे ॥ ५ ॥

कृत्तिकादीनि धिष्ण्यानि पूर्वाशादि लिखेत्क्रमात् ।
सप्त सप्त क्रमादेतान्यष्टाविंशतिसंख्यया ॥ ६ ॥

कृत्तिकादि अभिजित्सहित २८ नक्षत्र हैं। उनमें से कृत्तिकादि ७ पूर्व में, मघादि ७ दक्षिण में, अनुराधादि ७ पश्चिम में और धनिष्टादि ७ उत्तर में लिखै ॥ ६ ॥

अवकहडा दिशि प्राच्यां मटपरताश्च दक्षिणे ।
नयभजखाश्च वारुण्यां गसदचलास्तथोत्तरे ॥ ७ ॥

अ, व, क, ह, ड ये ५ पूर्व में; म, ट, प, र, त ये ५ दक्षिण में; न, य, भ, ज, ख ये ५ पश्चिम में और ग, स, द, च, ल ये ५ उत्तर में लिखै ॥ ७ ॥

त्रयस्त्रयो वृषाद्याश्च पूर्वाशादि बुधैः क्रमात् ।
राशयो द्वादशैवं तु मेषान्ताः सृष्टिमार्गतः ॥ ८ ॥

वृषादि मेषान्त १२ राशियों में से वृष, मिथुन, कर्क ये ३ पूर्व में: सिंह, कन्या, तुला ये ३ दक्षिण में ; वृश्चिक, धन, मकर ये ३ पश्चिम में और कुंभ, मीन, मेष ये ३ उत्तर में लिखै ॥ ८ ॥

शेषेषु कोष्ठकेष्वेवं नन्दादितिथिपञ्चकम् ।
वाराणां सप्तकं लेख्यं भौमादित्यक्रमेण च ॥ ९ ॥

बाकी रहे (५) कोठों में नन्दादि पांच प्रकार की तिथियों को लिखै (अर्थात् नन्दा को पूर्व में, भद्रा को दक्षिण में, जया को पश्चिम में, रिक्ता को उत्तर में और पूर्णा को मध्य में लिखै) और इन तिथियों के साथ में आगे कहे भौम तथा आदित्य के क्रम से सात वारों को भी लिखै ॥ ९ ॥

भौमादित्यौ च नन्दायां भद्रायां बुधशीतगू ।
जयायां च गुरुःप्रोक्तो रिक्तायां भार्गवस्तथा ॥ १० ॥
पूर्णायां शनिवारश्च लेख्यं चक्रेऽत्र निश्चितम् ।

भौम तथा आदित्य को नन्दा के, बुध तथा सोम को भद्रा के, गुरु को जया के, शुक्र को रिक्ता के और शनिवार को पूर्णा के कोठे में लिखै ॥ १० ॥

इस प्रकार का चक्र इस पुस्तक के आरंभ में जोड़ा है ।

इत्येष सर्वतोभद्रविस्तारः कीर्तितो मया ॥ ११ ॥

पूर्वशास्त्रानुसारेण यथोक्तं ब्रह्मयामले ।

यह सर्वतोभद्रचक्र बनाने का विस्तार पूर्वशास्त्र के अनुसार जैसा ब्रह्मयामलग्रन्थ में कहा है वैसा मैंने कहा ॥ ११ ॥

वेधज्ञानप्रकरणम् ।

सूर्यादिकान् ग्रहान् सर्वान्विन्यसेत् स्वस्वऋक्षके १२॥

वेध देखने के समय सूर्यादि सर्व ग्रहों को अपने अपने नक्षत्र पर (अर्थात् जो ग्रह जिस नक्षत्र पर हो उसको इस चक्र में भी उसी नक्षत्र पर) लिखै ॥ १२ ॥

यस्मिन् ऋक्षे स्थितः खेटस्ततो वेधत्रयं भवेत् ।
ग्रहदृष्टिवशेनात्र वामसंमुखदक्षिणे ॥ १३ ॥

इस सर्वतोभद्रचक्र में जिस नक्षत्र पर ग्रह स्थित हो उस नक्षत्रस्थान से तीन ओर को वेध होते हैं । वे वेध ग्रह की वाम, संमुख तथा दक्षिण दृष्टि के अनुसार जानना, अर्थात् ग्रह की जिस ओर को दृष्टि हो उसी ओर को वेध होता है, और जिस ओर को दृष्टि न हो उस ओर को वेध भी नहीं होता ॥ १३ ॥

वक्रगे दक्षिणा दृष्टिर्वामा दृष्टिश्च शीघ्रगे ।
मध्याचारे तथा मध्या ज्ञेया भौमादिपञ्चके ॥ १४ ॥

भौमादि पांचों (मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि) ग्रहों में से जो ग्रह वक्री हो उसकी दृष्टि दाहिनी ओर को, जो ग्रह शीघ्रगामी (अतिचारी) हो उसकी दृष्टि बाईं ओर को और जो ग्रह मध्यचारी हो उसकी दृष्टि सामने को होती है, क्योंकि ये ग्रह कभी वक्र, कभी शीघ्र और कभी मध्य गति में रहते हैं; अतः गति के बदलने से इनकी दृष्टि भी बदल जाती है ॥ १४ ॥

राहुकेतू सदा वक्रौ शीघ्रगौ चन्द्रभास्करौ ।

गतेरेकस्वभावत्वादेषां दृष्टित्रयं सदा ॥ १५ ॥

राहु तथा केतु की सदा वक्र गति और चन्द्र तथा सूर्य की सदा शीघ्र गति है, अतः गति के एक ही स्वभाव से इन चारों ग्रहों की सदा तीनों ओर को दृष्टि होती है, क्योंकि गति के न बदलने से दृष्टि भी नहीं बदलती ॥ १५ ॥

वामेतराऽग्रदृष्ट्या च वेधास्त्रिधा प्रकीर्तिताः ।
ऋक्षाऽक्षरस्वरतिथिराशिवेधश्च पञ्चधा ॥ १६ ॥

वाम, दक्षिण तथा सम्मुख दृष्टि से वेध तीन ओर को कहे हैं। उन वेधों से नक्षत्र, अक्षर, स्वर, तिथि और राशि ये पांच वेधे जाते हैं ॥ १६ ॥

ग्रहः सव्यापसव्येन चक्षुषा वेधयेत्पुनः ।
ऋक्षाऽक्षरस्वरादिंस्तु संमुखेनान्त्यभं तथा ॥ १७ ॥

परन्तु वेधकर्त्ता ग्रह की वामदृष्टि हो तो बाईं ओर के तथा दक्षिणदृष्टि हो तो दाहिनी ओर के नक्षत्र, अक्षर, स्वर, तिथि और राशि इन पांचों में से जो वेध की सीध में हैं उन सब को वेध होता है और सम्मुखदृष्टि से केवल सामने के एक नक्षत्र ही को वेध होता है ऐसा जानना ॥ १७ ॥

प्रत्येकनक्षत्रस्थानाद्वेधज्ञानम् ।

तत्तद्वेधनिर्णयार्थं मूलशास्त्रानुसारतः ।
चक्रोद्धारक्रमेणैव वेधलक्षणमुच्यते ॥ १८ ॥

तिस तिस वेध के निर्णयार्थ अर्थात् किस नक्षत्रस्थान से और किस दृष्टि से किस नक्षत्रादि को वेध होगा सो मूलशास्त्र के अनुसार चक्रोद्धारक्रम से अर्थात् कृत्तिकादि प्रत्येक नक्षत्रस्थान से वेध के लक्षण कहता हूँ ॥ १८ ॥

वह्निस्थखेचरो याम्यमकारं वृषराशिनम् ।
नन्दाभद्रातिथिं तौलिं तं विशाखां श्रुतिं हरेत् १९ ॥

यदि ताराग्रहो वक्र एक एव यमं हरेत् ।
शीघ्रगश्चेदकारोर्द्धं नन्दा भद्रा सवारकम् ॥
तुला तकारमिन्द्राग्निदैवतं च भिनन्ति च ॥२०॥
मध्यगत्या समानश्च वैष्णवर्क्षं भिनन्ति च ॥

कृत्तिका नक्षत्र पर स्थित ग्रह भरणीनक्षत्र, अकार अक्षर, वृषराशि, नन्दा भद्रा तिथि, तुलाराशि, तकार अक्षर, विशाखा नक्षत्र और श्रवण नक्षत्र को वेधता है । इनमें भी भरणी को दक्षिणदृष्टि से, अ, वृष, नन्दा, भद्रा, तुला, त, विशाखा को वामदृष्टि से और श्रवण को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ १९।२० ॥

रोहिणीसंस्थितः खेटो वं युग्ममौ स्त्रियं हरेत् ।
रं स्वातिमुस्वरं दस्रमभिजिदृक्षमाहरेत् ॥ २१ ॥

रोहिणी नक्षत्र पर स्थित ग्रह व, मिथुन, औ, कन्या, र, स्वाति को वामदृष्टि से, उ, अश्विनी को दक्षिणदृष्टि से और अभिजित् को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २१ ॥

सौम्यसंस्थो हन्ति खेटः ककारं कर्कटं हरिम् ।
पं त्वाष्ट्रभमस्वरं लं पौष्णर्क्षं वैश्वभं पुरः ॥ २२ ॥

मृगशिर नक्षत्र पर स्थित ग्रह क, कर्क, सिंह, प, चित्रा को वामदृष्टि से; अ, ल, रेवती को दक्षिणदृष्टि से और उत्तराषाढा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २२ ॥

आर्द्रासंस्थः खगो हन्याद्धं ऌकारं टमर्कभम् ।
वमक्षरं ॡचकारमुत्तराभाद्रमंबुभम् ॥ २३ ॥

आर्द्रा पर स्थित ग्रह ह, ऌ, ट, हस्त को वामदृष्टि से; व, ॡ, च, उत्तराभाद्रपदा को दक्षिणदृष्टि से और पूर्वाषाढा को संमुखदृष्टि से वेधता हैं ॥ २३ ॥

आदित्यसंस्थितः खेटो डकारमाक्षरार्यमम् ।
कं वृषाजौ दकारं च पूर्वाभाद्रं च नैरृतम् ॥२४ ॥

पुनर्वसु पर स्थित ग्रह ङ, म, उत्तराफाल्गुनी को वामदृष्टि से; क, वृष, मेष, द, पूर्वाभाद्रपदा को दक्षिणदृष्टि से और मूल को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २४ ॥

पुष्यस्थः खेट ऊकारं भगर्क्षं हं युगं हरेत् ।
ओकारं मीनराशिं च सं कपं ज्येष्ठभं तथा ॥ २५ ॥

पुष्य पर स्थित ग्रह ऊ, पूर्वाफाल्गुनी को वामदृष्टि से; ह, मिथुन, ओ, मीन, स, शतभिषा को दक्षिणदृष्टि से और ज्येष्ठा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २५ ॥

आश्लेषासंस्थितः खेटो मघां डं कर्कटं क्रमात् ।
नन्दां रिक्तां हरेत्कुंभं गकारं वसुमित्रभे ॥ २६ ॥

आश्लेषा पर स्थित ग्रह मघा को वामदृष्टि से; ड, कर्क, नन्दा, रिक्ता, कुंभ, ग, धनिष्ठा को दक्षिणदृष्टि से और अनुराधा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २६ ॥

मघाऋक्षस्थितः खेटो मकारं केसरिं हरेत् ।
भद्रां जयां तिथिं नक्रं खं विष्णुं सार्पभं यमम् २७

मघा पर स्थित ग्रह म, सिंह, भद्रा, जया, मकर, ख, श्रवण को वामदृष्टि से; आश्लेषा को दक्षिणदृष्टि से और भरणी को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २७ ॥

पूर्वाफाल्गुनिगः खेटष्टं कन्यामं स्वरं धनुः ।
जकारमभिजिद्धन्यादूस्वरं पुष्यदस्रभे ॥ २८ ॥

पूर्वाफाल्गुनी पर स्थित ग्रह, ट, कन्या, अं, धन, ज, अभिजित् को वामदृष्टि से; ऊ, पुष्य को दक्षिणदृष्टि से और अश्विनी को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २८ ॥

उत्तरर्क्षे गतः खेटः पकारं तौलिवृश्चिकौ ।
भं वैश्वर्क्षं मं डकारमदितिं रेवतीं हरेत् ॥ २९ ॥

उत्तराफाल्गुनी पर स्थित ग्रह प, तुला, वृश्चिक, भ, उत्तराषाढा

को वामदृष्टि से; म, ड, पुनर्वसु को दक्षिणदृष्टि से और रेवती को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ २९ ॥

हस्तर्क्षगः खगो रं च एस्वरं याक्षरं हरेत् ।
अंबुभं टं लृस्वरं हं शिवमुत्तरभाद्रभम् ॥ ३० ॥

हस्त पर स्थित ग्रह र, ए, य, पूर्वाषाढा को वामदृष्टि से; ट, लृ, ह, आर्द्रा को दक्षिणदृष्टि से और उत्तराभाद्रपदा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३० ॥

चित्रर्क्षगः खेचरस्तं नकारं नैर्ऋतिं हरेत् ।
पं केसरी कुलीरौ कं चन्द्रर्क्षं पूर्वभाद्रभम् ॥ ३१ ॥

चित्रा पर स्थित ग्रह त, न, मूल को वामदृष्टि से; प, सिंह, कर्क, क, मृगशिर को दक्षिणदृष्टि से और पूर्वाभाद्रपदा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३१ ॥

स्वात्यर्क्षगः खगो हन्ति ऋस्वरं ज्येष्ठभं क्रमात् ।
रं कन्याऔस्वरं युग्मं वं विधिं शततारकाम् ॥३२॥

स्वाति पर स्थित ग्रह ऋ, ज्येष्ठा को वामदृष्टि से; र, कन्या, औ, मिथुन व रोहिणी को दक्षिणदृष्टि से और शतभिषा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३२ ॥

विशाखास्थः खगो हन्यान्मित्रभं तं तुलां क्रमात् ।
भद्रां नन्दां वृषराशिमस्वरं वह्निभं वसुम् ॥ ३३ ॥

विशाखा पर स्थित ग्रह अनुराधा को वामदृष्टि से; त, तुला, भद्रा, नन्दा, वृष, अ, कृत्तिका को दक्षिणदृष्टि से; और धनिष्टा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३३ ॥

अनुराधास्थितः खेटो विशाखां नमलिं जयाम् ।
रिक्तातिथिं क्रियं हन्याल्लकारं याम्यसार्पभे ॥३४॥

अनुराधा पर स्थित ग्रह विशाखा को दक्षिणदृष्टि से न, वृश्चिक,

जया, रिक्ता, मेष, ल, भरणी को वामदृष्टि से और आश्लेषा को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३४ ॥

ज्येष्ठर्क्षगः खगो हन्ति यकारं चापमस्वरम् ।
मीनं चकारं तुरगमृस्वरं स्वातितिष्यभे ॥ ३५ ॥

ज्येष्ठा पर स्थित ग्रह य, धन, अः, मीन, च, अश्विनी को वामदृष्टि से; ऋ, स्वाति को दक्षिणदृष्टि से और पुष्य को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३५ ॥

मूलस्थः खेचरो हन्याद्भं नक्रं कुंभराशिकम् ।
नकारं रेवतीं नं तं चित्रामादित्यमग्रगाम् ॥ ३६ ॥

मूल पर स्थित ग्रह भ, मकर, कुंभ, द, रेवती को वामदृष्टि से; न, त, चित्रा को दक्षिणदृष्टि से और पुनर्वसु को सम्मुख दृष्टि से वेधता है ॥ ३६ ॥

तोयर्क्षगो हन्ति खेटो जमैकारं सकारकम् ।
अहिर्बुध्न्यं यमेस्वरं रकारं हस्तमार्द्रभम् ॥ ३७ ॥

पूर्वाषाढा पर स्थित ग्रह ज, ऐ, स, उत्तराभाद्रपदा को वामदृष्टि से; य, ए, र, हस्त को दक्षिणदृष्टि से और आर्द्रा को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३७ ॥

वैश्वर्क्षगः खेचरः खं गकारं पूर्वभाद्रभम् ।
भकारमलिजूकं पमुत्तरां शशिभं हरेत् ॥ ३८ ॥

उत्तराषाढा पर स्थित ग्रह ख, ग, पूर्वाभाद्रपदा को वामदृष्टि से; भ, वृश्चिक, तुला, प, उत्तराफाल्गुनी को दक्षिणदृष्टि से और मृगशिर को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३८ ॥

अभिजित्स्थः खगो हन्ति ऋकारं शततारकाम् ।
जं चापमंस्वरं कन्यां टकारं भाग्यधातृभे ॥ ३९ ॥

अभिजित् पर स्थित ग्रह ऋ, शतभिषा को वामदृष्टि से; ज,

धन, अं, कन्या, ट, पूर्वाफाल्गुनी को दक्षिणदृष्टि से और रोहिणी को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ३९ ॥

गोविन्दगः खं मकरं जयां भद्रां तिथिं ग्रहः ।
सिंहं मकारं पैत्र्यर्क्षं धनिष्ठां हन्ति कृत्तिकाम् ॥४०॥

श्रवण पर स्थित ग्रह धनिष्ठा को वामदृष्टि से; ख, मकर, जया, भद्रा, सिंह, म, मघा को दक्षिणदृष्टि से और कृत्तिका को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४० ॥

वस्वृक्षगः खगो हन्ति गकारं कुंभराशिकम् ।
रिक्तां नन्दां कुलीरं डं सार्पं विष्णुद्विदैवतम् ॥ ४१ ॥

धनिष्ठा पर स्थित ग्रह ग, कुंभ, रिक्ता, नन्दा, कर्क, ड, आश्लेषा को वामदृष्टि से; श्रवण को दक्षिणदृष्टि से और विशाखा को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४१ ॥

शततारर्क्षगः खेटः सं मीनमोस्वरं युगम् ।
हं पुष्यं हन्ति ऋकारमभिजित्स्वातिमग्रगाम् ४२ ॥

शतभिषा पर स्थित ग्रह स, मीन, ओ, मिथुन, ह, पुष्य को वामदृष्टि से; ऋ, अभिजित् को दक्षिणदृष्टि से और स्वाति को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४२ ॥

पूर्वाभाद्रस्थितः खेटो दं मेषं वृषभं हरेत् ।
कमादित्यं गकारं खमुत्तराषाढत्वाष्ट्रभे ॥ ४३ ॥

पूर्वाभाद्रपदा पर स्थित ग्रह द, मेष, वृष, क, पुनर्वसु को वामदृष्टि से ; ग, ख, उत्तराषाढा को दक्षिणदृष्टि से और चित्रा को संमुख-दृष्टि से वेधता है ॥ ४३ ॥

उत्तराभाद्रगः खेटश्चं लृं वामार्द्रभं क्रमात् ।
सकारमैस्वरं हन्ति जं तोयर्क्षं रविं पुनः ॥ ४४ ॥

उत्तराभाद्रपदा पर स्थित ग्रह च, लृ, व, आर्द्रा को वामदृष्टि

से; स, ऐ, ज, पूर्वाषाढा को दक्षिणदृष्टि से और हस्त को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४४ ॥

रेवतीसंस्थितः खेटो दं कुंभं नक्रराशिकम् ।
भं नैर्ऋतिं लकारमं चंद्रर्क्षमुत्तरां हरेत् ॥ ४५ ॥

रेवती पर स्थित ग्रह द, कुंभ, मकर, भ, मूल को दक्षिणदृष्टि से; ल, अ, मृगशिर को वामदृष्टि से और उत्तराफाल्गुनी को संमुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४५ ॥

अश्विनीसंस्थितः खेटश्चं मीनमः स्वरं धनुः ।
याक्षरं ज्येष्ठभं हन्ति उकारं विधिभं भगम् ॥ ४६ ॥

अश्विनी पर स्थित ग्रह च, मीन, अः, धन, य, ज्येष्ठा को दक्षिणदृष्टि से ; उ, रोहिणी को वामदृष्टि से और पूर्वाफाल्गुनी को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४६ ॥

भरणीसंस्थितः खेटो लकारं मेषराशिकम् ।
रिक्तां जयामलिं हन्यान्नं मित्रमग्निपित्र्यभे ॥ ४७ ॥

भरणी पर स्थित ग्रह ल, मेष, रिक्ता, जया, वृश्चिक, न, अनुराधा को दक्षिणदृष्टि से; कृत्तिका को वामदृष्टि से और मघा को सम्मुखदृष्टि से वेधता है ॥ ४७ ॥

चक्रेऽनुक्ताक्षरवेधज्ञानम् ।

बवौ शसौ षखौ चैव ज्ञेयाविति परस्परम् ।
एकेन द्वितयं ज्ञेयं शुभाशुभखगव्यधे ॥ ४८ ॥

ब व, श स, ष ख इन दो दो अक्षरों में परस्पर सम्बन्ध है; अतः चक्र में लिखे हुए एक अक्षर को शुभाशुभ ग्रह का वेध होने से चक्र में नहीं लिखे हुए दूसरे अक्षर को भी वेध हो जाता है ॥ ४८ ॥

घङछाः षणठाश्चैव धफढास्थभञास्तथा ।
एकत्रिकं त्रिकं विद्धं विद्धैः कपभदैः क्रमात् ॥ ४९ ॥

क, प, भ, द, इन अक्षरों को वेध होने से क्रम से घ ङ छ, ष ण ठ, ध फ ढ, थ झ ञ इन तीन तीन अक्षरों को वेध होता है अर्थात् 'क' से घ ङ छ को; 'प' से ष ण ठ को; 'भ' से ध फ ढ को; और 'द' से थ झ ञ को वेध जानना ॥ ४९ ॥

घङछा रौद्रगे वेधे षणठा हस्तगे ग्रहे ।
धफढाः पूर्वाषाढायां थझञा भाद्रउत्तरे ॥ ५० ॥

अथवा आर्द्रा नक्षत्र पर वेध हो तो घ, ङ, छ को; हस्त पर वेध हो तो ष, ण, ठ को; पूर्वाषाढा पर वेध हो तो ध, फ, ढ को; और उत्तराभाद्रपदा पर वेध हो तो थ, झ, ञ को वेध हो जाता है ॥ ५० ॥

स्वरवेधे विशेषक्रमः ।

अवर्णादिस्वरद्वंद्वेष्वेकवेधे द्वयोर्व्यधः ।
युक्तस्वरात्मके वेधे त्वनुस्वारविसर्गयोः ॥ ५१ ॥

अवर्णादि दो दो स्वर—अर्थात् अ आ, इ ई, उ ऊ, ऋ ॠ, लृ लॄ, ए ऐ, ओ औ, अं अः—इन सवर्णी स्वरों में से किसी एक को वेध होने से दोनों ही को वेध हो जाता है । और अनुस्वार तथा विसर्ग जिस स्वर के साथ हो उस स्वर को वेध होने से अनुस्वार वा विसर्ग को भी वेध हो जाता है ॥ ५१ ॥

कोणस्थधिष्ण्ययोर्मध्य अन्त्यादिपादगे ग्रहे ।
अस्वरादिचतुष्कस्य वेधः पूर्णातिथेः क्रमात् ॥५२॥

ईशानादि कोणों के दो-दो नक्षत्र हैं । उनमें से प्रथम नक्षत्र के अन्त्य के पाद पर तथा दूसरे नक्षत्र के प्रथम पाद पर ग्रह स्थित हो तो कोण में के स्वर को वेधेगा । अर्थात् ग्रह भरणी के अन्त्य वा कृत्तिका के प्रथम पाद पर हो तो ईशान कोण के 'अ' को; आश्लेषा के अन्त्य वा मघा के प्रथम पाद पर हो तो अग्निकोण के 'अ' को; विशाखा के अन्त्य वा अनुराधा के प्रथम पाद पर हो तो नैर्ऋत्य कोण के 'इ' को; और श्रवण के अन्त्य वा धनिष्ठा के प्रथम पाद

पर हो तो वायव्य कोण के 'ई' को वेधता है। और इसी क्रम से अर्थात् जो ग्रह कोण में के किसी स्वर को वेधेगा वही ग्रह मध्य में स्थित पूर्णातिथि को भी वेधेगा ॥ ५२ ॥

सूर्यादिग्रहप्रकरणम् ।

सूर्यश्चन्द्रश्च भौमश्च बुध ईज्यश्च भार्गवः ।
शनी राहुश्च केतुश्च प्रोक्ता एते नव ग्रहाः ॥ ५३ ॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु ये नव ग्रह कहे हैं ॥ ५३ ॥

शन्यर्कराहुकेत्वाराः क्रूराः शेषाः शुभा ग्रहाः ।
क्रूरयुक्तो बुधः क्रूरः क्षीणचन्द्रस्तथैव च ॥ ५४ ॥

शनि, सूर्य, राहु, केतु तथा मंगल ये क्रूर और चंद्र, बुध, बृहस्पति तथा शुक्र ये सौम्य ग्रह कहे हैं। इनमें बुध तथा चन्द्रमा यद्यपि सौम्य हैं तथापि बुध तो क्रूर ग्रह से युक्त होने से और चन्द्रमा क्षीण होने से क्रूर हो जाता है ॥ ५४ ॥

क्षीणचन्द्रज्ञानम् ।

दशम्यवधि कृष्णे तु पक्षे पूर्णो हि चन्द्रमाः ।
ततःपरं क्षीणचन्द्रः क्षीणः कार्ये विवर्जितः ॥ ५५ ॥

शुक्लपक्ष की ५ से लेके कृष्णपक्ष की १० मी तक चन्द्रमा पूर्ण रहता है; वह सौम्य है। और कृष्णपक्ष की ११ से लेके शुक्लपक्ष की ५ मी तक क्षीण रहता है, वह क्रूर जानना ॥ ५५ ॥

क्रूरयुक्त बुधज्ञान ।

क्रूरयुक्तो समांशके ५६ ॥

क्रूर ग्रह नक्षत्र के जिस पाये पर हो उसी पाये पर बुध भी हो तो अर्थात् एक नवांश पर हो तब बुध भी क्रूर हो जाता है ॥ ५६ ॥

क्रूरा वक्रा महाक्रूराः सौम्या वक्रा महाशुभाः ।
स्युः सहजस्वभावस्थाः साम्याः क्रूराश्चशीघ्रगाः॥५७॥

क्रूर ग्रह वक्री हो तो महाक्रूर, तथा सौम्य ग्रह वक्री हो तो महाशुभ और सौम्य अथवा क्रूर ग्रह शीघ्र गति में हो तो सहज स्वभाववाले होते हैं ॥ ५७ ॥

ग्रहचारज्ञानम् ।

ग्रहचारस्य विज्ञानं वेधबोधे हि कारणम् ।
सूक्ष्मं करणागमाज्ज्ञेयं साधारणं ब्रवीमि तत् ॥५८॥

वेध जानने के लिये ग्रहचार के ज्ञान की आवश्यकता रहती है कि किस समय कौनसा ग्रह किस नक्षत्र पर तथा किस राशि पर है और किस समय कौनसा ग्रह उदय अस्त तथा वक्र मार्ग होगा? परन्तु यह विषय गणितशास्त्र का होने से इसका सूक्ष्म ज्ञान तो करणआदि ग्रहगणित सिद्धान्त के ग्रन्थों में किया गया है; तदनुसार तिथ्यादि पंचांग बनाये जाते हैं, जिनमें ग्रहचार स्पष्ट रूप से लिखा रहता है उसीको काम में लाना चाहिए, किन्तु ग्रहचार का स्थूल ज्ञान पाठकों को ज्ञान कराने के लिये साधारण से लिखा जाता है ॥ ५८ ॥

ग्रहराशिचारदिनानि ।

विधोर्भवति सांघ्यहो द्वयं सदैकभजमध्यभोगकम् ।
विदोऽक्षयमतुल्यवासरा सवित्र्युशनसोस्तथैकमाः ५९
युगं क्षितिभुवोऽथ मासयोरुषर्बुधकुभिर्मिता गुरोः ।
अगोधृतिमिताश्चमासकाःखवह्निभिरशुभ्ररोचिषः ६०

मध्यगति के स्थूलमान से सूर्य १ महीना, चन्द्र २।। दिन, मंगल १।। डेढ़ महीना, बुध २५ दिन, बृहस्पति १३ महीना, शनि ३० महीना और राहु तथा केतु १८ महीना राशि पर रहता है ॥ ५९।६० ॥

ग्रहनक्षत्रचारदिनानि ।

युगेन्दुसूर्ये दिनमेकचन्द्रे भौमेखनेत्रे बुधरन्ध्रनौवा । खरसेन्दु मित्रे शिवा च शक्रे खखाब्धिमन्दे तमखाब्धिनेत्रे ॥ ६१ । ६२ ॥

स्थूल मान से सूर्य १४ दिन, चन्द्र १ दिन, मंगल २० दिन, बुध ८ वा ९ दिन, बृहस्पति १६० दिन, शुक्र ११ दिन, शनि ४०० दिन और राहु तथा केतु २४० दिन एक नक्षत्र पर रहते हैं ।६१।६२।

ग्रहनक्षत्रपादचारदिनानि ।

नवांशेऽर्कसितज्ञानां सत्रिभागमहस्त्रियम् ।
नाड्यः पञ्चदशैवेन्दोर्भौमे पञ्च दिनानि च ॥६३॥
मासो जीवे दिनानि स्युस्त्रिभागेन चतुर्दश ।
शनेर्मासत्रयं त्र्यंशो राहोर्मासद्वयं पुनः ॥ ६४ ॥

स्थूलमान से सूर्य ३ दिन और २० घटि, चन्द्र १५ घटि, मंगल ५ दिन, बुध ३ दिन और २० घटि, बृहस्पति ४३ दिन और ४० घटि, शुक्र ३ दिन और २० घटि, शनि १०० दिन और राहु तथा केतु ६० दिन नक्षत्र के एक पाये पर रहते हैं, इसीको नवांश भी कहते हैं ॥ ६३ । ६४ ॥

ग्रहचारस्त्रिप्रकारो वक्रः शीघ्रः समस्तथा ।
वक्रातिवक्रकौटिल्यो वक्रोऽयं कथ्यते बुधैः ॥६५॥
मन्दो मध्योऽतिचारस्थो मार्गस्थो ग्रह उच्यते ।
अतिचारगतः शीघ्रः समो मन्दगतो ग्रहः ॥६६॥

ग्रहों का चार वक्र, शीघ्र तथा सम ऐसा तीन प्रकार का है, इनमें वक्र, अतिवक्र तथा कुटिल गतिवाले को वक्री कहा है; और मन्द, सम तथा शीघ्र गतिवाले को मार्गी कहा है; इस मार्गी के शीघ्र और समगति से दो भेद हैं, अर्थात् अतिचार गति को शीघ्रगति तथा मन्द और मध्यगति को समगति जानना ॥ ६५ । ६६ ॥

जानीयाद्गतयः सम्यगर्कस्थानाद्ग्रहचारिणाम् ।

ग्रहों की गति सूर्य के स्थान से अर्थात् ग्रहों के और सूर्य के अन्तर से जाननी चाहिये, जैसे—

सूर्यमुक्ता उदीयन्ते सूर्यग्रस्ताऽस्तगामिनः ॥ ६७ ॥

चन्द्रभौमादि ग्रह सूर्य के साथ अर्थात् आगे हों चाहे पीछे परन्तु अपने अपने कालांशों के भीतर आने से अस्त होते हैं, और सूर्य से अलग अर्थात् कालांशों से अधिक अन्तर हो जाने से उदय हो जाते हैं ।

इनमें मंगल, बृहस्पति और शनि ये ३ ग्रह सूर्य से सदा मन्दगतिवाले होने से सदैव ही पश्चिम में तो अस्त और पूर्व में उदय होते हैं, और बुध तथा शुक्र ये २ ग्रह कभी शीघ्र गति में तथा कभी वक्र गति में होते हैं, इसलिये जब शीघ्र गति में होते हैं तब तो पूर्व में तो अस्त और पश्चिम में उदय, ऐसे ही जब वक्री होते हैं तब पश्चिम में तो अस्त और पूर्व में उदय होते हैं, और चन्द्रमा सदा शीघ्र गतिवाला होने से पूर्व में तो अस्त और पश्चिम में उदय होता है ॥ ६७ ॥

चन्द्रादिग्रहकालांश ।

कालांशाः शशितो ज्ञेयाः सूर्याः सप्तदश क्रमात् ।
विश्वे रुद्रा नवेष्विन्दुमिता भूनास्तु वक्रिणः ॥६८॥

चन्द्रभौमादि ग्रह सूर्य के नजदीक आने से जितने अंशों तक अस्त रहते हैं उन अंशों को कालांश कहते हैं । इनमें स्थूल मान से चंद्रमा के १२, भौम के १७, बुध के १३ वक्री हो तो, १२ बृहस्पति के ११, शुक्र के ९ वक्री हो तो ८ और शनि के १५, कालांश कहे हैं ॥ ६८ ॥

शीघ्रा द्वितीयगे सूर्ये स्फुरद्बिम्बाः कुजादयः ।
समास्तृतीयगे ज्ञेया मन्दा भानौ चतुर्थगे ॥ ६९ ॥

वक्राः स्युः पञ्चषष्ठेऽर्के त्वतिवक्राऽष्टसप्तमे ।
नवमे दशमे भानौ जायते कुटिला गतिः ॥ ७० ॥
द्वादशैकादशे सूर्ये भजते शीघ्रतां पुनः ।
अदृश्यतां पुनर्लोके व्रजन्त्यर्कगता ग्रहाः ॥ ७१ ॥

स्थूलमान से कुजादि ग्रहों की राशि से अर्थात् मंगल, बृहस्पति और शनि की राशि से सूर्य दूसरी राशि पर हो तो ग्रह शीघ्रगामी होते हैं, तीसरी पर हो तो समचारी तथा चौथी पर हो तो मन्दचारी होते हैं, पांचवीं वा छठी पर हो तो वक्री, सातवीं वा आठवीं पर हो तो अतिवक्री, तथा नवमी वा दशमी पर हो तो कुटिल गतिवाले होते हैं। ग्यारहवीं वा बारहवीं पर हो तो पुनः शीघ्रगामी हो जाते हैं, और सूर्य की राशि में अर्थात् कालांशों में जाने से ग्रह लोक में फिर अस्त हो जाते हैं ॥ ६९ । ७० । ७१ ॥

अर्काद्द्वये द्वादशे च ज्ञसितौ वक्रशीघ्रगौ ।
तृतीयैकादशे चैव शुक्रसौम्यौ समौ स्मृतौ ॥ ७२ ॥

स्थूलमान से बुध तथा शुक्र सूर्य से दूसरी राशि पर जाने से वक्री, बारहवीं राशि पर जाने से शीघ्रगामी और तीसरी वा ग्यारहवीं राशि पर जाने से समचारी होते हैं ॥ ७२ ॥

भौमादिग्रहअस्तदिनानि ।

महीभुजोऽप्यंबरहेलयो नृपा
वियद्गुणा व्योमचराः षडग्नयः ॥
दिवौकसां पाशभृतोऽस्तवासरा
दिगाश्रिता ज्ञानिभिरत्र कीर्तिताः ॥ ७३ ॥

स्थूलमान से मंगल १२० दिन, बुध मार्गी हो तब तो ३६ दिन और वक्री हो तो १६ दिन, बृहस्पति ३० दिन, शुक्र मार्गी

हो तब तो १५ दिन और वक्री हो तो ९ दिन और शनि ३६ दिन तक अस्त रहते हैं ॥ ७३ ॥

भौमादिग्रहउदयदिनानि ।

क्रमेण तेऽष्टेषुरसैरगाग्निभिर्दृगाद्रिरामैर्विधुसायकाक्षिभिः । प्राच्यां दिनैरंकसुरैरथोदिताः पश्चाद्व्रजंत्यस्तमयं पुनर्ग्रहाः ॥ ७४ ॥

स्थूलमान से मंगल ६५८ दिन, बुध ३७ दिन वक्री हो तो ३३ दिन, बृहस्पति ३७२ दिन, शुक्र २५० दिन वक्री हो तो २४८ दिन, शनि ३४० दिन तक उदय रहते हैं ॥ ७४ ॥

भौमादिग्रहवक्रदिनानि ।

रसशैलाक्षिनेत्रौ च द्विसूर्याः शरसिन्धवः ।
सप्तविश्वे कुजादीनामिमे स्युर्वक्रवासराः ॥ ७५ ॥

स्थूलमान से मंगल ७६ दिन, बुध २३ दिन, बृहस्पति १२२ दिन, शुक्र ४५ दिन और शनि १३७ दिन वक्रचार में रहते हैं ॥ ७५ ॥

भौमादिग्रहमार्गदिनानि ।

शरांबरागा द्विनवाहितारकाः
सुरेषवो ह्यग्नियमाश्च वासराः ॥
तेषां स्वभुक्त्याननमार्गकाश्रिताः
स्मृता बुधैरूर्ध्वमतोऽथ वक्रगाः ॥ ७६ ॥

स्थूलमान से मंगल ७०५ दिन, बुध ९२ दिन, बृहस्पति २७८ दिन, शुक्र ५१० दिन और शनि २३८ दिन तक मार्गी रहते हैं ॥ ७६ ॥

भौमादिग्रहअतिचारकारणम् ।

ग्रहोऽतिवेगेन यदा स्वमार्गमाक्रांतभे गच्छति

यश्चरोक्ता । तदा गतिस्तस्य विहाय राशिं तमैष्यभे चातिचारो गतिज्ञैः ॥ ७७ ॥

भौमादि ग्रह जिस समय अपनी साधारण चाल (गति) से जितने समय में राशि के जितने भाग का भोग कर सके उतने भाग का अतिशीघ्र गति के कारण बहुत न्यून समय में भोग करके वर्तमान राशि को भोगकर आगे की राशि पर चला जावे उस समय उसे अतिचारि कहते हैं ।

जब मंगल की गति ४६ । ११, बुध की गति ११३ । ३२, बृहस्पति की गति १४ । ४, शुक्र की गति ७५।४२ और शनि की गति ७ । ४५ की हो तब ये ग्रह परम शीघ्रगामी अर्थात् अतिचारी होते हैं ॥ ७७ ॥

भौमादिग्रहअतिचारदिनानि ।

अर्धमासो दशाहानि त्रिपक्षं च दिवा दश ।
मासषरामङ्गलादीनामतिचारः प्रकीर्तितः ॥ ७८ ॥

स्थूल मान से मंगल १५ दिन, बुध १० दिन, बृहस्पति ४५ दिन, शुक्र १० दिन और शनि १८० दिन अतिचार में रहते हैं ॥ ७८ ॥

यत्र देशे यत्र काले दृश्यते गणितैक्यकम् ।
तेन मानेन ते कार्याः स्फुटास्तत्समयोद्भवाः ॥ ७९ ॥

जिस देश में और जिस काल में जिस गणित की ऐक्यता हो अर्थात् उदय अस्त, वक्र मार्ग, राशि तथा नक्षत्रचारादि निर्दिष्ट समय पर यथार्थ मिलते हों उसी गणित से उस समय के ग्रह स्पष्ट करने चाहिये ॥ ७९ ॥.

---

१ इस समय के प्रचलित देशीय पंचांगों में मारवाड़देशस्थ, राजधानी जोधपुर नगर से प्रकाशित ब्रह्मपक्षीय चंडू पंचांग का गणित सर्वमान्य है परन्तु इस समय के पंचांगनिर्माताओं (चंडू गणितालय राजकुमार सुमेरसभा के विद्वानों) को राज्य से

जन्मनामादिप्रकरणम् ।

यस्मिन्नृक्षे भवेज्जन्म यो वर्णस्तत्र यः स्वरः ।
या तिथिस्तत्र यो राशिर्विज्ञेयं जन्मकालतः॥ ८० ॥

जिस नक्षत्र में जन्म हो वह जन्मनक्षत्र, उस नक्षत्र के पादक्रम से जो अक्षर आता हो वह अक्षर, उस अक्षर का जो स्वर हो वह स्वर, जिस तिथि में जन्म हो वह तिथि, और नक्षत्र के पादानुसार जो राशि आती हो वह राशि ये नक्षत्रादि पांचों ही जन्मकाल से जानने चाहिये ॥ ८० ॥

जन्मनक्षत्रपादवशादक्षरज्ञानम् ।

चूचेचोलाऽश्विनी प्रोक्ता लीलूलेलो भरण्यथ ।
आईऊए कृत्तिका स्यादोवावीवू तु रोहिणी ॥ ८१ ॥

चू चे चो ला ये ४ अक्षर अश्विनी के चार पाद के हैं; ऐसे ही ली लू ले लो भरणी के ; आ ई ऊ ए कृत्तिका के ; और ओ वा वी वू रोहिणी के हैं ॥ ८१ ॥

वेवोकाकी मृगशिरः कूघङछ तथार्द्रका ।
केकोहाही पुनर्वसुर्हू हेहोडा तु पुष्यभम् ॥ ८२ ॥

आश्रय न मिलने से इसका भी गणितशिथिल होना संभव है ; यह खेद का विषय है । अतः श्रीमान् मरुधराधीशों से निवेदन है कि देश की इस प्राचीन अपूर्व विद्या के गौरव को चिरस्थायी रखने की ओर अवश्य ध्यान देके अपने पूर्वज महाराजों की तरह आप भी उदारता प्रकट कर यश के भागी हों ।

हर्ष का विषय है कि मेरे इस निवेदन पर कुछ ध्यान देकर चंडू-पंचांग के निर्माताओं को थोड़ा बहुत आश्रय दिया जाकर अब पंचांग भी राज्य की ओर से प्रकाशित होने लगा है । इससे अब भविष्य में इसकी उन्नति होने की आशा की जाती है । अतः ईश्वर से प्रार्थना है कि हमारे प्रजापालक श्रीमान् मरुधराधीश्वरों व उनके रेजीडेंट साहबों को सकुशल दीर्घायु करें ।

वे वो का की मृगशिर के ; कू घ ङ छ आर्द्रा के ; के को हा ही पुनर्वसु के; और हू हे हो डा पुष्य के हैं ॥ ८२ ॥

डीडूडेडो तथाश्लेषा मामीमूमे मघा स्मृता ।
मोटाटीटू पूर्वफल्गु टेटोपाप्युत्तरा तथा ॥ ८३ ॥

डी डू डे डो आश्लेषा के ; मा मी मू मे मघा के ; मो टा टी टू पूर्वाफाल्गुनी के ; और टे टो पा पी उत्तराफाल्गुनी के हैं ॥ ८३ ॥

पूषणाठ हस्ततारा पेपोरारी तु चित्रका ।
रूरेरोता स्मृता स्वाती तीतूतेतो विशाखिका ॥८४॥

पू ष ण ठ हस्त के ; पे पो रा री चित्रा के ; रू रे रो ता स्वाती के ; और ती तू ते तो विशाखा के हैं ॥ ८४ ॥

नानीनूनेऽनुराधर्क्षं ज्येष्ठा नोयायियू स्मृता ।
येयोभाभी मूलतारा पूर्वाषाढा भुधाफढा ॥ ८५ ॥

ना नी नू ने अनुराधा के; नो या यि यू ज्येष्ठा के ; ये यो भा भी मूल के; और भु धा फा ढा पूर्वाषाढा के हैं ॥ ८५ ॥

भेभोजाज्युत्तराषाढा जूजेजोखाभिजिद्भवेत् ।
खीखूखेखो श्रवणभं गागीगूगे धनिष्ठिका ॥ ८६ ॥

भे भो जा जी उत्तराषाढा के; जू जे जो खा अभिजित् के; खी खू खे खो श्रवण के; और गा गी गू गे धनिष्ठा के हैं ॥ ८६ ॥

गोसासीसू शतभिषक् सेसोदादी तु पूर्वभे ।
दूथझञोत्तराभाद्रा देदोचाची तु रेवती ॥ ८७ ॥

गो सा सी सू शतभिषा के; से सो दा दी पूर्वाभाद्रपदा के; दू थ झ ञ उत्तराभाद्रपदा के; और दे दो चा ची रेवती के हैं ॥ ८७ ॥

नामअक्षरवशात्स्वरज्ञानम् ।

मातृकायां पुरा प्रोक्ताः स्वराः षोडशसंख्यया ।
तेषां द्वावन्तिमौत्याज्यौ चत्वारश्च नपुंसकाः ॥ ८८ ॥

शेषा दश स्वरास्तेषु स्यादेकैको द्विके द्विके ।
ज्ञेया अतः स्वाराद्यास्ते स्वराः पंच स्वरोदये ॥८९॥

मातृका अर्थात् अकारादि हकारान्त अक्षर जो स्वर तथा व्यञ्जन के भेद से दो प्रकार के हैं, तिनमें प्रथम १६ स्वर हैं उनमें अन्त्य के २ स्वर (अं अः) त्याज्य हैं, और ४ स्वर (ऋ ॠ लृ ॡ) नपुंसक हैं सो भी त्याज्य हैं; बाकी रहे सवर्णी १० स्वर (अ आ, इ ई, उ ऊ, ए ऐ, ओ औ) तिनमें अकारादि दो दो स्वरों से एक एक स्वर—अर्थात् अ, इ, उ, ए ओ; ये पांच स्वर स्वरशास्त्र में माने हैं ॥ ८८ । ८९ ॥

कादिहान्तान् लिखेद्वर्णान् स्वराधो ङञणोज्झितान्।
तिर्यक्पंक्तिक्रमेणैव पंचत्रिंशत्प्रकोष्ठके ॥ ९० ॥

३५ कोठों के चक्र में ऊपर के ५ कोठों में उक्त अकारादि ५ स्वर आड़ी पंक्ति में लिखे, और नीचे के कोठों में ककार से लेके हकार तक ३३ वर्ण हैं तिनमें 'ङ ञ, ण' को छोड़के शेष ३० वर्ण ककारादि क्रम से आड़ी पंक्ति में लिखे; जैसे आगे के चक्र में लिखे हैं ॥ ९० ॥

वर्णस्वरचक्रम् ।

अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

नरनामादिमो वर्णो यस्माद्यस्मात्स्वरादधः ।
स स्वरस्तस्य वर्णस्य वर्णस्वर इहोच्यते ॥ ९१ ॥

मनुष्यादि के नाम के आदि का अक्षर स्वरचक्र में जिस स्वर के नीचे हो वही स्वर उस अक्षर का स्वर कहा है; उसी स्वर को लेना॥ ९१॥

न प्रोक्ता ङञणा वर्णा नामादौ सन्ति ते नहि ।
चेद्भवन्ति तदा ज्ञेया गजडास्तु यथाक्रमम् ॥ ९२॥

'ङ, ञ, ण' ये तीन अक्षर नाम के आदि में नहीं होते; इसीसे वर्णस्वरचक्र में नहीं कहे। तथापि यदि ये अक्षर किसी नाम के आदि में हों तो इनके स्थान में 'ग, ज, ड' ये अक्षर क्रम से जानें और इन्हीं का जो स्वर हो वह स्वर लेवें ॥ ९२ ॥

यदि नाम्नि भवेद्वर्णः संयोगाक्षरलक्षणः ।
ग्राह्यस्तस्यादिमो वर्णं इत्युक्तं ब्रह्मयामले ॥ ९३ ॥

यदि नाम के अक्षर में दो अक्षरयुक्त हों तो जो अक्षर प्रथम हो उसका स्वर लेना, ऐसा ब्रह्मयामल ग्रन्थ में कहा है ॥ ९३ ॥

यदा स्वरादिकं नाम तदा ग्राह्यं पराक्षरम् ।
देशे ग्रामे पुरे हर्म्ये नरनामादिनिर्णये ॥ ९४ ॥

देश, ग्राम, पुर, गृह और मनुष्यादि के नाम का प्रथम अक्षर स्वर ही हो तो उस स्वर को छोड़ के उसके आगे के अक्षर का जो स्वर हो वह लेवे ॥ ९४ ॥

स्वरवशात्तिथिज्ञानम् ।

नन्दा भद्रा जया रिक्ता पूर्णाश्च प्रतिपन्मुखाः ।

प्रतिपदादि पन्द्रह तिथियों को पांच भागों में तीन वार फिरावे। ऐसे १।६।११ को नन्दा, २।७।१२ को भद्रा, ३।८।१३ को जया, ४।९।१४ को रिक्ता और ५।१०।१५ वा ३० को पूर्णा जाने।

अकारादिस्वराणां च नन्दादितिथयः क्रमात्॥९५॥

नन्दादि पांच प्रकार की तिथियों में से अ स्वर की नन्दा, इ स्वर की भद्रा, उ स्वर की जया, ए स्वर की रिक्ता और ओ स्वर

की पूर्णा तिथि जाने । अतः जो तिथि जिस स्वर की है वही तिथि उस स्वर के वर्णों की भी होती है । पर नन्दादि प्रत्येक की तीन तीन तिथियों में से एक एक तिथि के वर्ण जानने का क्रम आगे कहते हैं ॥ ९५ ॥

आद्ये तिथौ त्रयो वर्णा द्वौ-द्वौ वै शेषयोर्यदि ।
एवं तिथित्रयज्ञेया वर्णसंख्या स्वरेष्वपि ॥ ९६ ॥

वर्णस्वरचक्र में प्रत्येक कोष्ठक के ७ अक्षरों में ऊपर के तीन अक्षरों (एक स्वर और दो अक्षर) की प्रथम तिथि, मध्य के दो अक्षरों की दूसरी तिथि और नीचे के दो अक्षरों की तीसरी तिथि नन्दादि तिथियों में से जाननी । जैसे आगे के चक्र में लिखी हैं ॥ ९६ ॥

स्वरवर्णतिथिचक्रम् ।

नन्दा	भद्रा	जया	रिक्ता	पूर्णा
अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
१	२	३	४	५
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
६	७	८	९	१०
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह
११	१२	१३	१४	१५

नक्षत्रवशाद्राशिज्ञानम् ।

सप्तविंशतिभानां च नवभिर्नवभिः पदैः ।
अश्विनीप्रमुखानां च मेषाद्या राशयः स्मृताः ॥ ९७ ॥

अश्विनी से लेके रेवती तक (अभिजित् को त्यागने से) २७ नक्षत्रों के १०८ पायों में से ९।९ पायों की एक-एक राशि के हिसाब से मेषादि १२ राशि होती हैं ; और अभिजित् का भोग उत्तराषाढा के अन्त्य के १ पाद तथा श्रवण के प्रथम पाद के आदि की चार घटियों में (अर्थात् मकर राशि के ६ अंश, ४० कला के उपरांत से लेके मकर के १० अंश, ५३ कला और २० विकला भोगने तक) होता है ; इसीसे यहाँ नहीं गिना ॥ ९७ ॥

अज्ञातजन्मकाले नामज्ञानम्।

जातकं च तिथिं राशिं विज्ञेयं नामगाक्षरैः।
अज्ञातजातकानां तु समस्तमभिधानतः ॥ ९८ ॥

जिन का जन्मकाल ज्ञात न हो तो उनका तिथि, राशि, नक्षत्र, अक्षर और स्वर व्यावहारिक नाम से जाने ॥ ९८ ॥

प्रसुप्तो भाषते येन येनागच्छति शब्दतः।
संस्कृतं प्राकृतं वापि ख्यातं नाम फलप्रदम् ॥ ९९ ॥

जिस नाम को पुकारने से सोता हुआ जाग उठे और बुलाने से शब्द सुनके आजावे वह नाम चाहे संस्कृत का, चाहे भाषा का हो ; किन्तु प्रसिद्ध नामही फल का देनेवाला है ॥ ९९ ॥

बहूनि यस्य नामानि नरस्य च कथंचन।
तस्य पश्चाद्भवं नाम ग्राह्यं स्वरविशारदैः ॥ १०० ॥

यदि मनुष्यादि के किसी प्रकार बहुत नाम हों तो उनमें जो नाम पीछे हुआ हो वही नाम स्वर के विद्वानों को लेना चाहिये। अतः जिसका जो नाम हो उसके नाम का प्रथम अक्षर, उस अक्षर का स्वरचक्र में जो स्वर हो वह स्वर, उस स्वर के वश से जो तिथि हो वह तिथि, उस अक्षर का जो नक्षत्र हो वह नक्षत्र और उस नक्षत्रवश से जो राशि हो वह राशि इन्हीं पांचों का वेध देखना ॥ १०० ॥

शुभाशुभकार्येषु वर्ज्यनक्षत्रप्रकरणम् ।

भुक्तं भोग्यं तथाक्रान्तं विद्धं क्रूरग्रहेण भम् ।
शुभाशुभेषु कार्येषु वर्जनीयं प्रयत्नतः ॥ १०१ ॥

क्रूर ग्रह से भुक्त (पहिले भोगा हुआ), भोग्य (आगे भोगनेवाला) तथा आक्रान्त (जिसको भोग रहा हो) और वेधा हुआ— ये नक्षत्र शुभाशुभ कार्यों में यत्न से त्याग देने चाहिये ॥ १०१ ॥

ऋक्षाणि क्रूरविद्धानि क्रूरभुक्तादिकानि च ।
भुक्त्वा चंद्रेण मुक्तानि शुभार्हाणि प्रचक्षते ॥ १०२ ॥

क्रूर ग्रह से विद्ध तथा क्रूर ग्रह से भुक्त, भोग्य और आक्रान्त नक्षत्रों में से जिस नक्षत्र को चन्द्रमा भोग करके छोड़ दे वह नक्षत्र फिर शुभकार्य में वर्जित नहीं है ॥ १०२ ॥

दग्धं क्रूरविमुक्तर्क्षं ज्वलितं क्रूरसंयुतम् ।
पुरतो धूमितं प्राहुः फलं तत्र विचिन्तयेत् ॥ १०३ ॥

क्रूर ग्रह से भुक्त नक्षत्र को दग्ध, आक्रान्त नक्षत्र को ज्वलित और आगे भोगनेवाले नक्षत्र को धूमित कहा है । इन नक्षत्रों के फल का तहां विचार करे जैसे—॥ १०३ ॥

ज्वलिते वर्तमानं च धूमे उद्योगमेव च ।
गतकाले फलं दग्धे क्रूरे हानिः शुभे शुभम् ॥ १०४ ॥

दग्ध का फल पहिले हुआ, ज्वलित का फल वर्तमान में होता है और धूमित का फल आगे होगा; ये फल क्रूर ग्रहों से अशुभ और शुभ ग्रहों से शुभ जानना ॥ १०४ ॥

मन्दभौमार्कवक्राणां भुक्ताभुक्तिविवर्जितम् ।
ज्वलितं धूमितं दग्धं त्रिविधं वेधलक्षणम् ॥ १०५ ॥

शनि, मंगल, सूर्य, राहु तथा केतु के भुक्त और भोग्य नक्षत्रों को छोड़कर आक्रान्त नक्षत्र स्थान से जिसको वेध रहा है वह

ज्वलित, जिसको आगे वेधेगा वह धूमित और जिसको पहिले वेधा था वह दग्ध; ऐसे तीन प्रकार के वेध जानने ॥ १०५ ॥

ज्वलिते देहपीडा स्याद्धूमितेऽरिष्टता भवेत् ।
दग्धे तु मृत्युमाप्नोति शुभे शुभकरं भवेत् ॥१०६॥

ज्वलित वेध से देह में पीड़ा, धूमित से अरिष्ट (दुःख, क्लेश, रोगादि) तथा दग्ध से मृत्यु होती है, और शुभ ग्रह के वेध से इसी प्रकार शुभ फल होता है ॥ १०६ ॥

नक्षत्रादिवेधफलप्रकरणम् ।

एकादिक्रूरवेधेन फलं पुंसां प्रजायते ।
उद्वेगश्च भयं हानी रोगो मृत्युः क्रमेण च ॥१०७॥

मनुष्यों के नक्षत्रादि पंचक को एकादि क्रूर ग्रह के वेध से क्रम से फल होता है । जैसें पाँच क्रूर ग्रहों में से एक वेधे तो उद्वेग, दो वेधें तो भय, तीन वेधें तो हानि, चार वेधें तो रोग और जो पाँचों ही वेधें तो मृत्यु होती है ॥ १०७ ॥

मरणं पंचभिर्विद्धैश्चतुर्भिः पीडनं भवेत् ।
अर्थनाशं परिक्लेशं नानारूपास्त्रिवेधतः ॥
बन्धुनाशो मनःपीडा द्वाभ्यामेकेन संभ्रमः ॥१०८॥

अथवा पाँचों क्रूर ग्रह वेधें तो मृत्यु, चार वेधें तो पीड़ा, तीन वेधें तो अर्थ का नाश तथा अनेक प्रकार के क्लेश, दो वेधें तो बन्धु का नाश तथा मन को कष्ट, और एक क्रूर ग्रह वेधे तो भ्रम होता है ॥ १०८ ॥

ऋक्षे भ्रमोऽक्षरे हानिः स्वरे व्याधिर्भयं तिथौ ।
राशौ विद्धे महाविघ्नं पंचविद्धो न जीवति ॥१०९॥

क्रूर ग्रह से नक्षत्र विधे तो भ्रम, अक्षर विधे तो हानि, स्वर

विधे तो व्याधि, तिथि विधे तो भय, राशि विधे तो महाविघ्न और जो नक्षत्रादि पाँचों ही विधें तो मृत्यु को प्राप्त होवे ॥ १०९ ॥

ऋक्षवेधे वधं बन्धोर्देहशोषादिपीडनम् ।
अक्षरे राजपीडा स्याद्रोगो मृत्युर्भवेत्तथा ॥ ११० ॥
राशौ विघ्नं च दुःखं च धातूनां क्षोभकृत्तथा ।
तिथिवेधे मतेर्भङ्गं स्वरे मृत्युभयप्रदम् ॥ १११ ॥

नक्षत्र विधे तो बन्धु का वध तथा शोष-रोगादि से देह में पीड़ा, अक्षर विधे तो राजा से पीड़ा तथा रोग वा मृत्यु, राशि विधे तो दुःख तथा धातु का कोप, तिथि विधे तो मति का भ्रष्ट होना, और स्वर विधे तो मृत्यु का भय होता है ॥ ११० । १११ ॥

तिथेर्वेधेऽर्थनाशश्च राशिना दुःखजं भयम् ।
अक्षरे शोकसन्तापौ ऋक्षे तुव्याधिसंक्रमम् ॥ ११२ ॥
स्वरवेधे भवेन्मृत्युः पंचविद्धो न जीवति ।

अथवा तिथि विधे तो अर्थ की हानि, राशि विधे तो दुःख का भय, अक्षर विधे तो शोक तथा संताप, नक्षत्र विधे तो रोग का आना, स्वर विधे तो मृत्यु का भय और ये पाँचों ही विधें तो निश्चय मृत्यु होती है ॥ ११२ ॥

ऋक्षवेधेन देवेशि ! वधबन्धादिकं फलम् ॥ ११३ ॥
अशुभं सर्वभावेषु देहशोषस्तु जायते ।

हे पार्वति ! नक्षत्र का वेध हो तो वधबन्धनादि तथा समस्त कामों में अनिष्ट फल होता है और क्षयरोग से देह भी सूख जाती है ॥ ११३ ॥

नामाक्षरेण विद्धेन स्त्रीभृत्यकलहो भवेत् ॥ ११४ ॥
गोमहिष्यो विनश्यन्ति रसाश्च विविधास्तथा ।
आमज्वरो भवेद्व्याधिरतिसारो न संशयः ॥ ११५ ॥

नाम के अक्षर का वेध हो तो स्त्री से तथा नौकरों से कलह, गायों, भैंसों तथा अनेक प्रकार के रसों का नाश और आमज्वर वा अतिसार रोग निश्चय होता है ॥ ११४ । ११५ ॥

स्वरे वेधे तु संप्राप्ते जायन्ते दारुणा रुजः ।
हेमरत्नादिनाशं च विग्रहो बान्धवैः सह ॥ ११६ ॥

स्वर का वेध हो तो भयंकर रोग, सुवर्ण रत्न आदि पदार्थों का नाश और बांधवों के साथ विग्रह (कलह) होता है ॥ ११६ ॥

तिथिवेधेन ये विद्धा विपरीतं धनादिषु ।
भ्रमस्तु जायते घोरो बुद्धिभ्रंशश्च जायते ॥११७॥
नभसः पतनं ज्ञेयं सर्वार्थस्तु विनश्यति ।

तिथि का वेध हो तो धनादि पदार्थ विपरीत हो जाते हैं (अर्थात् धनादि का नाश होता है), तथा घोर भ्रम, बुद्धि का नाश, ऊंचे से गिरना और सम्पूर्ण अर्थों का नाश होता है॥११७॥

राशिवेधे तु दुःखानि क्लेशाश्च विविधास्तथा ११८॥
धातुक्षोभो महाक्षोभो जायते नात्र संशयः ।

राशि का वेध हो तो अनेक प्रकार के दुःख तथा क्लेश, धातु का कोप और महान् क्षोभ निश्चय होता है ॥ ११८ ॥

एकेन संभ्रमो ज्ञेयो मनस्तापो द्वितीयके ॥११९॥
तृतीयेनार्थनाशः स्याच्चतुर्थे च महद्भयम् ।
पंचमे विद्धमात्रे तु शीघ्रं गच्छेद्यमालयम् ॥१२०॥

नक्षत्रादिपंचक में जो प्रथम विधे तो भ्रम, दूसरा विधे तो मन को ताप, तीसरा विधे तो अर्थ का नाश, चौथा विधे तो महाभय और पांचवां विधे तो तत्काल यमराज की पुरी को गमन होता है ॥ ११९ । १२० ॥

एकवेधे भयं युद्धे युग्मवेधे धनक्षयः ।

त्रिवेधेन भवेद्भङ्गो मृत्युर्वेधचतुष्टये ॥ १२१ ॥

एक वेध से युद्ध में भय, दो वेध से धन का क्षय, तीन वेध से युद्धादि में भंग और चार वेध से मृत्यु होती है ॥ १२१ ॥

क्रूराणां फलमादिष्टं सौम्यानां तु फलं शृणु ।

पूर्वोक्त क्रूर ग्रहों के वेध का फल कहा, अब सौम्य ग्रहों के वेध का फल कहता हूँ सो श्रवण करो ।

सौभाग्यं लाभदं चैव विजयं धनसौख्यदम् १२२ ॥

सौम्य ग्रहों के एक वेध से सौभाग्य की वृद्धि, दो वेध से लाभ, तीन वेध से जय और चार वेध से धन का सुख होता है ॥ १२२ ॥

सौम्यग्रहैस्तिथिर्विद्धा द्रव्यलाभं विनिर्दिशेत् ।
ऋक्षे विद्धे देहवृद्धिरभयं सिद्धिरुत्तमा ॥ १२३ ॥
विद्धे राशौ सुखं याति नाम्नो निर्भयतां व्रजेत् ।
स्वरवेधे तु सौभाग्यं पञ्चपञ्चाङ्गलाभदाः ॥ १२४ ॥

सौम्य ग्रहों से तिथि विधे तो द्रव्य का लाभ, नक्षत्र विधे तो देह की पुष्टि तथा भयरहित उत्तम सिद्धि, राशि विधे तो सुख, नाम का अक्षर विधे तो निर्भयता, स्वर विधे तो सौभाग्य की वृद्धि, और पांचों विधें तो पांचों ही के फल का लाभ होता है ॥ १२३।१२४ ॥

यथा दुष्टफलाः क्रूरास्तथा सौम्याः शुभप्रदाः ।
क्रूरयुक्ताः पुनः सौम्या ज्ञेयाः क्रूरफलप्रदाः १२५ ॥

जैसे क्रूर ग्रह अशुभ फल को देते हैं वैसे सौम्य ग्रह शुभ फल को देते हैं; परन्तु क्रूर ग्रह के साथ अर्थात् नक्षत्र के एक पाये पर (एक नवांश में) हों तो सौम्य ग्रह भी अशुभ फल देते हैं। किन्तु इसमें इतना भेद है कि अन्य सौम्य ग्रहों का बल क्रूर युक्त हो तो भी निज सौम्य स्वभावानुसार ही रहता है पर बुध का तो बल भी क्रूर स्वभावानुसार हो जाता है; इसीसे क्रूरयुक्त बुध को क्रूर कहा है ॥ १२५ ॥

सूर्यादिग्रहवेधफलप्रकरणम् ।

अर्कवेधे मनस्तापो द्रव्यहानिश्च भूसुते ।
रोगपीडाकरः सौरी राहुकेतू च विघ्नदौ ॥ १२६ ॥

सूर्य के वेध से मन को ताप, मंगल के वेध से द्रव्य की हानि, शनि के वेध से रोग तथा पीड़ा, और राहु अथवा केतु के वेध से विघ्न होता है ॥ १२६ ॥

अर्कवेधे मनस्तापो राजमंत्रिविरोधतः ।
शीतज्वरः शिरःशूलः प्रवासः सर्वनाशनम् ॥ १२७ ॥
बहुदुःखमवाप्नोति भीतिः कष्टं चतुष्पदात् ।
पितृमातृविरोधादि धनहानिः पशुक्षयः ॥ १२८ ॥

सूर्य के वेध से राजा तथा राजमंत्री के विरोध से मन को ताप, शीतज्वर, शिर में शूल, प्रवास (परदेश जाना), सर्व प्रकार से नाश, बहुत दुःख की प्राप्ति, चौपाये (पशु) से भय तथा कष्ट, पिता माता से विरोध आदि, धन की हानि और पशुओं का नाश होता है ॥ १२७ । १२८ ॥

भौमवेधेऽर्थहानिश्च बुद्धिनाशः कुलक्षयः ।
धान्यादिभूमिनाशश्च धातुक्षोभादिरोगकृत् ॥ १२९ ॥
कार्यहानिर्मनस्तापो भौमवेधेन सिद्ध्यति ।
भार्यापुत्रादिविपदो द्रव्यहानिस्तु भूसुते ॥ १३० ॥
भूमिक्षेत्रे च संवादे समरे कलहप्रदः ।
जातिभ्रंशं वियोगश्च कुक्षिरोगप्रदो भवेत् ॥ १३१ ॥
विदेशगमनं चैव रक्तमोक्षस्य संभवः ।

मंगल के वेध से अर्थ की हानि, बुद्धि का नाश, कुल का क्षय, धान्य आदि भूमि का नाश, धातुविकार आदि रोग, कार्य की हानि,

मन को ताप, स्त्री पुत्र आदि भी दुःखदायक, द्रव्य की हानि, भूमि-क्षेत्र में संवाद में तथा युद्ध में क्लेश, जाति से अलग होना, स्वजनों से वियोग, उदर में रोग, विदेश में गमन और रुधिरपात का संभव होता है ॥ १२९ । १३० । १३१ ॥

शनौ व्याधिर्भयं शोकं बंधुभृत्यसुहृत्क्षयम् ।
चातुर्थिकज्वरादिश्च प्रवासो बंधनं तथा ॥ १३२ ॥
स्थानहानिमहाव्याधिर्नीचस्त्रीवशविग्रहः ।
अभिघाताद्युग्रकर्म मरणं पश्यति ध्रुवम् ॥ १३३ ॥
तत्कालयुद्धयात्रायां शनिवेधेन सिद्ध्यति ।
रोगपीडाकरः सौरिः शरीरे क्षयकृद्भवेत् ॥ १३४ ॥

शनि के वेध से व्याधि, भय, शोक, स्वजन, नौकर तथा मित्रों का क्षय, चातुर्थिक ज्वरादि रोग, परदेश में जाना। बंधन, स्थान की हानि, महाव्याधि, नीच स्त्री के वश से विग्रह, अभिघात आदि उग्र कर्म से मृत्यु, युद्ध की यात्रा में पराजय, रोग से पीड़ा और शरीर का क्षय होता है॥१३२।१३३। १३४॥

राहुर्हृद्रोगतन्मूर्च्छाघातादिभ्यो भयं भवेत् ।
सर्वकार्येषु सर्वत्र राहुर्विघ्नप्रदायकः ॥ १३५ ॥
शूद्रस्त्रीविधवाप्राप्तिर्ब्रह्मद्वेषश्च जायते ।

राहु के वेध से हृदयरोग, मूर्च्छारोग, घात आदि का भय, सब कामों में सर्वत्र विघ्न, शूद्र की स्त्रीकी वा विधवा स्त्री की प्राप्ति और ब्राह्मणों से वैर होता है ॥ १३५ ॥

केतुर्धान्यहरः स्त्रीषु हानी राजादिकं भयम् ॥१३६॥
प्राप्याप्राप्तिर्देहपीडा यद्वा तद्वा परम्परा ।

केतु के वेध से धान्य का हरण, स्त्री की हानि, राजा आदि से भय, मिलने योग्य वस्तु की अप्राप्ति, देह में पीड़ा, और ऐसेही अन्य अशुभ फल परम्परा से जानना क्योंकि ॥ १३६ ॥

शनिवत्कुजवच्चैव राहुकेत्वोः समं फलम्॥ १३७॥

शनि और मंगल के समान राहु तथा केतु का फल होता है॥ १३७॥

रविभौमार्किवेधेन युक्तो वा हिमगुर्यदा।
त्रिजन्मसु शिरोरोगो ज्वरोदरभगंदराः॥
भवन्ति रक्तपित्तादिर्डाकिनीशाकिनीभयम्॥१३८॥

सूर्य, मंगल और शनि के वेध में जो चन्द्रमा भी युक्त हो तो तीन जन्मों में शिर में रोग, ज्वर, उदर, भगंदर तथा रक्तपित्त आदि रोग और डाकिनी-शाकिनी से भय होता है॥ १३८॥

यस्मिन् ऋक्षे संस्थितो वेधकर्ता
पापः खेटः सोऽन्त्यभं याति यस्मिन्॥
काले तस्मिन् मंगलं पीडितानां
प्रोक्तं सद्भिर्नान्यथा स्यात् कदाचित्॥ १३९॥

क्रूर ग्रह जिस नक्षत्र पर से वेध करता हो उस नक्षत्र को छोड़कर जिस समय दूसरे नक्षत्र पर चला जावे अर्थात् उसका वेध निकल जावे उस समय वही ग्रह अपने वेध के अशुभ फल को मिटाकर निश्चय शुभफलदायक हो जाता है॥ १३९॥

चन्द्रे मिश्रफलं पुंसां रतिलाभश्च भार्गवे।
बुधवेधे भवेत्प्रज्ञा जीवः सर्वफलप्रदः॥ १४०॥

चन्द्रमा के वेध से मिश्रफल (अर्थात् पूर्ण चन्द्रमा से शुभ और क्षीण चन्द्रमा से अशुभ) शुक्र के वेध से रतिलाभ (स्त्रीसंभोगादि सुख की प्राप्ति), बुध के वेध से उत्तम बुद्धि और बृहस्पति के वेध से समस्त कामों के फल की प्राप्ति होती है॥ १४०॥

चन्द्रे मिश्रफलं पुंसां युद्धे जयः शुभं वदेत्॥१४१॥
भूषणं वस्त्रमांदोलं यानशय्याशनादिकम्।

सर्वव्याधिविनाशं च पूर्णचन्द्रस्य वेधतः ॥ १४२॥

चन्द्रमा के वेध से मिश्रफल होता है अर्थात् पूर्ण चंद्रमा के वेध से युद्ध में जय तथा शुभ, आभूषण, वस्त्र, पालकी, वाहन, शय्या, भोजनादि की प्राप्ति और सर्व प्रकार के रोगों का नाश होता है ॥ १४१ । १४२ ॥

कार्यहानिर्मनस्तापो देहक्षोभादिरोगकृत् ।
प्रवासं बंधनं चैव क्षीणचन्द्रस्य वेधतः ॥ १४३ ॥

क्षीण चन्द्रमा के वेध से कार्य की हानि, मन को ताप, देह में सन्ताप आदि रोग, प्रवास और बंधन होता है ॥ १४३ ॥

बुधे स्त्रीपुत्रविद्यार्थिराजानुग्रहशान्तिकम् ।
विवाहं राजसम्मानं कृषिवाणिज्यसेवकाः ॥ १४४॥
बंधमोक्षौ व्याधिनाशो बुधवेधेन सिद्ध्यति ।
बुधवेधे भवेत्प्रज्ञा राज्यलाभं यशस्तथा ॥ १४५ ॥

बुध के वेध से स्त्री, पुत्र तथा शिष्य से सुखप्राप्ति, राजा की कृपा, शान्ति, विवाह, राजा से मान, खेती, व्यापार तथा नौकर से फलप्राप्ति, कैद से छूटना, रोग का नाश, उत्तम बुद्धि, राज्य का लाभ और यश मिलता है ॥ १४४ । १४५ ॥

अस्तगे क्रूरसंयुक्ते शत्रुक्षेत्रगतेऽपि वा ।
नीचक्षेत्रगते वापि विपरीतफलं त्विदम् ॥ १४६ ॥

यदि वेध करता बुध अस्त हो, वा क्रूर ग्रह से युक्त हो, वा शत्रु की राशि में हो, वा नीच राशि में हो तो पूर्वोक्त सर्व शुभ फल का उलटा (अशुभ) फल होता है ॥ १४६ ॥

गुरौ सर्वार्थसिद्धिश्च राजानुग्रहशान्तयः ।
मंत्राभिषेकनिरतो देवपूजारतो भवेत् ॥ १४७ ॥
शरीरे सुखसौभाग्यं जीवः शुभफलप्रदः ।

बृहस्पति के वेध से सर्व प्रकार के अर्थ की सिद्धि, राजा की कृपा, शान्ति, मंत्राभिषेक में तथा देवपूजा में तत्पर, शरीर में सुख-सौभाग्य और सर्व प्रकार से शुभ फल होता है ॥ १४७ ॥

क्रूरग्रहयुते चैव मरणं व्याधिपीडनम् ॥ १४८ ॥
राजक्षोभं तथा कार्यनाशं चैवापवादकम् ।
मनःक्लेशं प्रवासादि स्त्रीपुत्ररोगबंधनम् ॥ १४९ ॥

यदि वेध करता बृहस्पति क्रूर ग्रह से युक्त हो तो मृत्यु, व्याधि से पीड़ा. राजा का कोप, कार्य का नाश, अपकीर्ति, मन में क्लेश, प्रवास आदि, स्त्री तथा पुत्र को रोग और बंधन होता है ॥ १४८ । १४९ ॥

भृगुपुत्रेण योग्या स्त्री राजानुग्रहशान्तयः ।
स्त्रीसंयोगफलप्राप्तिर्विवाहे सौख्यमेव च ॥ १५० ॥
जलधान्यादिवस्तूनां शुक्रवृद्धिः प्रजायते ।
पुत्रपौत्रकलत्रं च धनधान्यसुखानि च ॥ १५१ ॥

शुक्र के वेध से योग्य स्त्री की प्राप्ति, राजा की कृपा, शान्ति, स्त्री के संयोग से फलप्राप्ति, विवाह में सुख, जल धान्य आदि वस्तुओं की तथा वीर्य की वृद्धि, पुत्र, पौत्र, स्त्री, धन, धान्य और सुख की प्राप्ति होती है ॥ १५० । १५१ ॥

भार्गवे क्रूरयुक्ते च धनहानिः पशुक्षयः ।
कलहः स्त्रीभिरेवं स्यात् सर्वहानिर्न संशयः ॥ १५२ ॥

यदि वेध करता शुक्र क्रूर ग्रह से युक्त हो तो धन की हानि, पशुओं का क्षय, स्त्रियों से कलह, ऐसी सर्व प्रकार से निश्चय हानि होती है ॥ १५२ ॥

पक्षादितात्कालिकग्रहप्रकरणम् ।

मेषादिमासपक्षाहःक्षणतात्कालिकग्रहान् ।
उपग्रहांश्च लक्षांश्च क्रमादेतांल्लिखेत्तथा ॥ १५३ ॥

मेषादि राशियों के, मास के, पक्ष के, दिन के और क्षण के तात्कालिक ग्रह; उपग्रह और ग्रहलत्ता को लिखे । इनमें गणित से प्राप्त ग्रहों को माससंज्ञक जाने । और पक्षादि तात्कालिक ग्रह अब कहते हैं । तथा उपग्रह और लत्ता को आगे कहेंगे ॥ १५३ ॥

पक्षग्रहाः ।

सूर्यस्थितर्क्षमारभ्य द्वादशे केतुरुच्यते ।
केतोः सप्तदशे सौम्यःसौम्याच्चतुर्थभे भृगुः ॥१५४॥
भृगोर्मनौ तमः प्रोक्तो राहोरष्टादशे कुजः ।
कुजात्त्रयोदशे जीवो जीवाद्दिग्भेऽर्कनन्दनः ॥१५५॥
शनेः पञ्चदशे चन्द्र एते पक्षग्रहाः स्मृताः ।

जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उस नक्षत्र स्थान से १२ वें नक्षत्र पर केतु, केतु से १७ वें बुध, बुध से ४ थे शुक्र, शुक्र से १४ वें राहु, राहु से १८ वें मंगल, मंगल से १३ वें बृहस्पति, बृहस्पति से १० वें शनि, और शनि से १५ वें नक्षत्र पर चन्द्रमा; इस क्रम से ये पक्ष के ग्रह जानने ॥ १५४ । १५५ ॥

दिनग्रहाः ।

चन्द्रस्थितर्क्षमारभ्य भूसुतः सप्तमे स्थितः ॥ १५६ ॥
कुजाच्चतुर्थे सौम्यस्तु सौम्यात्पञ्चमगो गुरुः ।
गुरोः षष्ठे भृगुश्चैव भृगोः सप्तमभे शनिः ॥ १५७ ॥
शनेर्नव रविर्ज्ञेयो रवेर्नवमभे तमः ।
राहोर्नवमभे केतुश्चैते दिनखगाः स्मृताः ॥ १५८ ॥

जिस नक्षत्र पर चन्द्रमा हो उस नक्षत्र स्थान से ७ वें नक्षत्र पर मंगल, मंगल से ४ थे बुध, बुध से ५ वें बृहस्पति, बृहस्पति से ६ टें शुक्र, शुक्र से ७ वें शनि, शनि से ९ वें सूर्य, सूर्य से ९ वें राहु और राहु से ९ वें नक्षत्र पर केतु—इस क्रम से ये दिन के ग्रह जानने ॥ १५६ । १५७ । १५८ ॥

क्षणग्रहाः ।

रामबाणपुरोरंध्रवसुरत्नगजापुरः ।
आदित्यादिग्रहाः सर्वे क्षणसंज्ञाश्च खेचराः १५६ ॥

जिस नक्षत्र पर सूर्य स्थित हो उस नक्षत्रस्थान से ३ रे नक्षत्र पर चन्द्र, चन्द्र से ५ वें मंगल, मंगल से ७ वें बुध, बुध से ८ वें बृहस्पति, बृहस्पति से ८ वें शुक्र, शुक्र से १४ वें शनि, शनि से ८ वें राहु और राहु से ७ वें नक्षत्र पर केतु—इस क्रम से ये क्षण के ग्रह जानने ॥ १५९ ॥

पक्षवर्ती पक्षबलं नित्यवेधे समादिशेत् ।
आश्चर्यं हि नित्यफलं यदुक्तं वेधमार्गतः ॥ १६० ॥

पक्ष के ग्रहों से पक्ष में, दिन के ग्रहों से दिन में और क्षण के ग्रहों से क्षण में तात्कालिक आश्चर्यरूप वेधफल पूर्वोक्त वेध की रीति के अनुसार से ही जानना ॥ १६० ॥

ग्रहबलप्रकरणम् ।

स्वक्षेत्रस्थे बलं पूर्णं पादोनं मित्रभे ग्रहे ।
अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते ॥ १६१ ॥

सौम्य तथा क्रूर ग्रहों का स्थानबल अपनी राशि पर ग्रह हो तो पूर्ण—चार पाद, मित्र की राशि पर हो तो तीन पाद, सम की राशि पर हो तो दो पाद और शत्रु की राशि पर हो तो एक पाद बल होता है ॥ १६१ ॥

इदं च सौम्यक्रूराणां बलं स्थानवशात्समम् ।
एतदेव फलं बोध्यं सौम्ये शूरे विपर्ययात् ॥ १६२ ॥

सौम्य तथा क्रूर ग्रहों का स्थानबल तो समान है; परन्तु फल में विपरीतता है अर्थात् सौम्यों का तो जितना स्थानबल हो उतना ही

फल है; क्रूरों का तो उस स्थानबल से उलटा फल जानना। जैसे आगे के दो श्लोकों में कहा है ॥ १६२ ॥

स्वक्षेत्रस्थे फलं पूर्णं पादोनं मित्रभे शुभे ।
अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते ॥ १६३ ॥

सौम्य ग्रहों का स्थानफल अपनी राशि पर हो तो पूर्ण (२०), मित्र की राशि पर हो तो पौन (१५), सम की राशि पर हो तो आधा (१०) और शत्रु की राशि पर हो तो चौथाई (५) होता है १६३ ॥

शत्रुगृहे स्थिते पूर्णं पादोनं समवेश्मनि ।
अर्धं मित्रगृहे ज्ञेयं पादं पापे स्ववेश्मनि ॥ १६४ ॥

क्रूर ग्रहों का स्थानफल शत्रु की राशि पर हो तो पूर्ण (२०), सम की राशि पर हो तो पौन (१५), मित्र की राशि पर हो तो आधा (१०) और अपनी राशि पर हो तो चौथाई (५) होता है ॥ १६४ ॥

स्थानवेधसमायोगे यत्संख्यं जायते बलम् ।
तत्संख्यं वेध्यवस्तूनां फलं ज्ञेयं विचक्षणैः ॥१६५॥

वेध करनेवाले ग्रह का जितना स्थानबल प्राप्त हो उतना ही विधी हुई वस्तु का वेधफल विचक्षणों से जानना चाहिये ॥ १६५ ॥

वक्रग्रहे फलं द्विघ्नं त्रिगुणं स्वोच्चसंस्थिते ।
स्वभावजं फलं शीघ्रे नीचस्थोऽर्धफलो ग्रहः १६६ ॥

स्थानफल देनेवाला ग्रह जो वक्री हो तो पूर्वोक्त प्राप्त फल का दूना, शीघ्र गति में हो तो स्वभावानुकूल (अर्थात् जितना फल आया उतना ही), उच्च राशि पर हो तो तिगुना, और नीच राशि पर हो तो आधा फल होता है ॥ १६६ ॥

ग्रहाः क्रूरास्तथा सौम्या वक्रमार्गोच्चनीचगाः ।
स्थानं च बोध्यमित्येवं बलं ज्ञात्वा फलं वदेत् १६७॥

क्रूर तथा सौम्य ग्रहों को, वक्री तथा मार्गी गति को, उच्च तथा नीच राशि को और स्वमित्र, सम तथा शत्रुस्थान को जाने फिर तदनुसार पूर्वोक्त रीति से बल को जानके फल कहे ॥ १६७ ॥

मित्रसमशत्रुज्ञानम् ।

सुहृदश्चन्द्रभौमेज्या ज्ञः समोऽन्येऽरयो रवेः ।
तीक्ष्णांशुः शशिजो मित्रे समाः शेषा निशापतेः १६८
ज्ञोऽरिर्भौमस्य शुक्रार्की समावन्ये सुहृत्खगाः ।
मित्रेऽर्कशुक्रौ ज्ञस्येन्दुः शत्रुर्मध्याः परे ग्रहाः १६९॥
सूरेः सौम्यसितौ शत्रू मध्यो मन्दः परेऽन्यथा ।
ज्ञार्की मित्रे कवेर्मध्यौ कुजेज्यावन्यथाऽपरे॥ १७०॥
शुक्रज्ञौ सुहृदौ चार्केः समो जीवोऽरयः परे ॥ १७१ ॥

सूर्य के—चन्द्र, मंगल, बृहस्पति मित्र; बुध सम; और शुक्र, शनि शत्रु हैं। चन्द्रमा के—सूर्य, बुध मित्र ; और मंगल, गुरु, शुक्र, शनि सम हैं। मंगल के—सूर्य, चन्द्र, बृहस्पति मित्र; शुक्र, शनि सम; और बुध शत्रु हैं। बुध के—सूर्य, शुक्र, मित्र; मंगल, बृहस्पति, शनि सम; और चन्द्रमा शत्रु हैं। बृहस्पति के—सूर्य, चन्द्र, मंगल मित्र; शनि सम; और बुध, शुक्र शत्रु हैं। शुक्र के—बुध, शनि मित्र; मंगल, बृहस्पति सम; और सूर्य, चन्द्रमा शत्रु हैं। शनि के—बुध, शुक्र मित्र; बृहस्पति सम; और सूर्य, चन्द्र, मंगल शत्रु हैं। इसका चक्र आगे लिखा है ॥ १६८ । १६९ । १७० । १७१ ॥

मैत्रीचक्रम् ।

ग्रह	सू.	चं.	मं	बु.	बृ.	शु.	श.
मित्र	चं. मं. बृ.	सू. बु.	सू. च बृ.	सू. शु.	सू. चं. मं.	बु. श.	बु. शु.
सम	बु.	मं. बृ. शु. श.	शु. श.	मं. बृ. श.	श.	मं. बृ.	बृ.
शत्रु	शु. श.	०	बु.	चं.	बु. शु.	सू. चं.	सू. चं. मं.

ग्रहक्षेत्रज्ञानम् ।

मेषो वृषोऽथ मिथुनो कर्कटः सिंहकन्यके ।
तुलाऽथ वृश्चिको धन्वी मकरः कुंभमीनकौ ॥१७२॥

१ मेष, २ वृष, ३ मिथुन, ४ कर्क, ५ सिंह, ६ कन्या, ७ तुला, ८ वृश्चिक, ९ धन, १० मकर, ११ कुंभ और १२ मीन—ये मेषादि द्वादश राशि कहाती हैं ॥ १७२ ॥

मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाभृतोः ।
बुधः कन्यामिथुनयोः पतिः कर्कस्य चन्द्रमाः ॥१७३॥
सिंहस्याधिपतिः सूर्यः शनिर्मकरकुंभयोः ।
जीवो धनुर्मीनयोश्च कथितो गणकोत्तमैः ॥ १७४ ॥

पूर्वोक्त राशियों में से १।८ का स्वामी मंगल, २।७ का शुक्र, ३।६ का बुध, ४ का चन्द्रमा, ५ का सूर्य, १०।११ का शनि और ९।१२ का स्वामी गुरु उत्तम ज्योतिर्विदों ने कहा है; अर्थात् इन राशियों को ग्रहों का स्थान वा क्षेत्र माना है, जिसका चक्र आगे लिखा है ॥ १७३ । १७४ ॥

स्वक्षेत्रादिचक्रम् ।

स्थान	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
स्वक्षेत्र	५	४	१।८	३।६	९।१२	२।७	१०।११
मित्रक्षेत्र	४ १।८ ९।१२	५ ३।६	५ ४ ९।१२	५ २।७	५ ४ १।८	३।६ १०।११	३।६ २।७
सम क्षेत्र	३।५	१।८ २।७ ९।१२ १०।११	२।७ १०।११	१।८ ९।१२ १०।११	१० ११	१।८ ९।१२	९ १२
शत्रु क्षेत्र	२।७ १०।११	०	३।६	४	३।६ २।७	५ ४	५ ४ १।८

उच्चनीचसमस्थानज्ञानम् ।

मेषो वृषो मृगः कन्या कर्कमीनतुलाधराः ।
आदित्यादिग्रहोच्चाः स्युर्नीचं यत्तस्य सप्तमम् १७५॥

सूर्य मेष का, चन्द्रमा वृष का, मंगल मकर का, बुध कन्या का, बृहस्पति कर्क का, शुक्र मीन का और शनि तुला का उच्च होता है। और इन उच्च राशियों से सातवीं राशियों पर सूर्यादि ग्रह नीच होते हैं; अर्थात् सूर्य तुला का, चन्द्रमा वृश्चिक का, मंगल कर्क का, बुध मीन का, बृहस्पति मकर का, शुक्र कन्या का और शनि मेष का नीच जानना ॥ १७५ ॥

परमोच्चा दिशो रामा अष्टाविंशत्तिथीन्द्रियाः ।
सप्तविंशास्तथा विंशाः सूर्यादीनां तथांशकाः १७६॥

सूर्य मेष के १० अंश पर, चन्द्रमा वृष के ३ अंश पर, मंगल मकर के २८ अंश पर, बुध कन्या के १५ अंश पर, बृहस्पति कर्क के ५ अंश पर, शुक्र मीन के २७ अंश पर और शनि तुला के २० अंश पर परम उच्च होता है ॥ १७६ ॥

परमोच्चात्परं नीचमर्धचक्रान्तसंख्यया ।

ग्रहों के परम उच्च (राशि अंश) में छः (६) राशि मिलाने से परम नीच (राशि अंश) होते हैं।

उच्चान्नीचाच्च यत्तुर्यं समस्थानं तदुच्यते ॥ १७७ ॥

ग्रहों की उच्च राशि से और नीच राशि से चौथी राशि को समस्थान अर्थात् उच्च और नीच का मध्य स्थान कहा है ॥ १७७ ॥

राहुकेतुस्वक्षेत्रादिज्ञानम् ।

कन्या राहुगृहं प्रोक्तं मिथुनं स्वोच्चसंज्ञितम् ।
नीचं धनुः समाख्यातं फलं वर्णश्च मन्दवत् ॥१७८॥

राहु का कन्या राशि स्वक्षेत्र, मिथुन राशि उच्च, धन राशि नीच और फल तथा वर्ण आदि शनि के तुल्य हैं ॥ १७८ ॥

केतोर्मीनः स्वगृहं स्याद्धनुरुच्चमिति स्मृतम् ।
नीचस्थानं नृयुग्मं स्याद्राहुकेत्वोः समं फलम् ॥ १७६ ॥

केतु का मीन राशि स्वक्षेत्र, धन राशि उच्च, मिथुन राशि नीच और फल राहु तथा केतु का समान है ॥ १७९ ॥

राहुकेत्वोः पुनर्मैत्री शत्रुताऽन्यान् ग्रहान् प्रति ।

राहु तथा केतु की आपस में मित्रता है, और दूसरे ग्रहों से शत्रुता है ।

मुहूर्तप्रकरणम् ।

तिथिराश्यंशनक्षत्रं विद्धं क्रूरग्रहेण यत् ।
सर्वेषु शुभकार्येषु वर्जयेत्तत्प्रयत्नतः ॥ १८० ॥

तिथि, राशि, अंश (नवांश) और नक्षत्र में से जो क्रूर ग्रह से विधा हो उसको समस्त शुभ कार्यों में यत्न से त्याग देना चाहिये ॥ १८० ॥

न नन्दति विवाहे च यात्रायां न निवर्तते ।
न रोगान्मुच्यते रोगी वेधवेलाकृतोद्यमः ॥ १८१ ॥

विधे हुए तिथ्यादिकों में विवाह करे तो आनन्द नहीं पाता; यात्रा करे तो पीछा नहीं आता; और रोग का प्रारंभ हो तो रोगी से रोग नहीं छूटता है ॥ १८१ ॥

स्थाननाशं राशिवेधे हानिर्नक्षत्रवेधतः ।
अंशवेधे भवेन्मृत्युः क्रूरग्रहफलं त्विदम् ॥ १८२ ॥
राशिनक्षत्रांशवेधे मृत्युर्भवति नान्यथा ।

क्रूर ग्रह राशि को वेधे तो स्थान का नाश, नक्षत्र को वेधे तो हानि, अंश को वेधे तो मृत्यु और इन तीनोंही को वेधे तो निश्चय मरण हो जाता है; इसमें संशय नहीं ॥ १८२ ॥

क्रूरदृष्टिर्गता यत्र शुभं तत्र विवर्जयेत् ॥ १८३ ॥

रविदृष्टिर्गता यत्र मनसः खेदमाप्नुयात् ।
भौमदृष्टौ वधं युद्धं मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥१८४॥
सौरिदृष्टौ भवेद्धानिर्देहपीडा तथा भवेत् ।
राहुणा घातपातं च केतुर्विषप्रदो भवेत् ॥ १८५ ॥

राशि, नक्षत्र और अंश इनमें से जिस पर क्रूर ग्रहों की दृष्टि हो उसको भी शुभ कार्यों में वर्ज देना चाहिये । क्योंकि सूर्य की दृष्टि से मन को खेद, मंगल की दृष्टि से वध, युद्ध तथा निश्चय मृत्यु, शनि की दृष्टि से हानि तथा देह में पीड़ा, राहु की दृष्टि से घाव का लगना और केतु की दृष्टि से विष (जहर) होता है ॥ १८३ । १८४ । १८५ ॥

शुभग्रहाणां दृष्टिश्चेत्सर्वसिद्धिः प्रजायते ।
बुधदृष्टौ भवेत्प्रज्ञा गुरुदृष्टिर्यदा भवेत् ॥ १८६ ॥
क्षेमं लाभं जयं सौख्यं शुक्रः शुभफलप्रदः ।

जिस पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, उस राश्यादि में कार्य करने से सर्व प्रकार के कामों की सिद्धि होती है । जैसे बुध की दृष्टि से उत्तम बुद्धि, गुरु की दृष्टि से क्षेम, लाभ, जय तथा सुख और शुक्र की दृष्टि से सर्व प्रकार का शुभ फल होता है ॥ १८६ ॥

शुक्ले शुभकरश्चन्द्रः कृष्णोऽप्यशुभदायकः ॥१८७॥

चन्द्र की दृष्टि से शुक्लपक्ष में शुभ और कृष्णपक्ष में अशुभ फल अर्थात् पूर्ण चन्द्र का शुभ तथा क्षीण चंद्र का अशुभ जानना । नक्षत्र पर ग्रहों की दृष्टि का विधान आगे कहेंगे ॥ १८७ ॥

रोगप्रकरणम् ।

रोगकाले भवेद्वेधः क्रूरखेचरसंभवः ।
वक्रगत्या भवेन्मृत्युः शीघ्रगत्या रुजान्वितः ॥१८८॥

रोग के समय क्रूर ग्रह का वेध वक्रगति से हो तो रोगी की मृत्यु होती है और शीघ्रगति से हो तो रोग बना रहता है ॥ १८८ ॥

आदित्ये ज्वरपीडा स्याद्भौमश्च प्राणरोगदः ।
अपस्मारभयं राहौ मन्दे शूलं विनिर्दिशेत् ॥१८९॥

रोगकाल में वेधकर्ता सूर्य हो तो ज्वर से पीड़ा, मंगल हो तो प्राणरोग (श्वासकासादि), राहु वा केतु हो तो अपस्मार (मृगी) रोग का भय, और शनि हो तो शूलरोग कहना चाहिये ॥ १८९ ॥

नक्षत्रवेधसंयुक्ते चक्षुःपीडा प्रजायते ।
मनस्तापं तथोद्वेगं मतिभ्रंशोऽथ जायते ॥१९०॥

क्रूर ग्रह का वेध नाम के नक्षत्र को हो तो नेत्रपीड़ा, मन को क्लेश तथा उद्वेग और मति भ्रष्ट हो जावे ॥ १९० ॥

क्रूरैर्नामाक्षरैर्विद्धे दाघः शोषो ज्वरो भवेत् ।
पित्तोद्रेकस्तथा छर्दिरिति ज्ञेयं विचक्षणैः ॥१९१॥

क्रूर ग्रह का वेध नाम के अक्षर को हो तो शरीर में दाह, शोष वा क्षयरोग, ज्वरपीड़ा, पित्तप्रकोप से उलटी आदि की पीड़ा होवे ॥ १९१ ॥

स्वरे वेधे मुखे पीडा कर्णव्याधिस्तथैव च ।
दन्तानां पीडनं तत्र क्रूरवेधे न संशयः ॥ १९२ ॥

क्रूर ग्रह का वेध नाम के स्वर को हो तो मुख में रोग, दन्त पीड़ा और कान में पीड़ा होवे ॥ १९२ ॥

तिथिवेधे त्वचां पीडा गडगुल्मादिका तथा ।
शिरोर्तिपादशोफश्च सर्वसन्धिषु पीडनम् ॥ १९३ ॥

क्रूर ग्रह का वेध नाम की तिथि को हो तो शरीर की त्वचा में खुजली आदि का कष्ट, उदर में गडगुल्म आदि रोग, शिर में पीड़ा पगों में सूजन और सर्व सन्धि में अत्यन्त पीड़ा होवे ॥ १९३ ॥

राशिवेधे भवेद्रोगो मन्दाग्निघातकोपनम् ।
श्लेष्मा च जायते तत्र अन्तर्नाडीव्यथा भवेत् १६४॥

क्रूर ग्रह का वेध नाम की राशि को हो तो अग्निमन्द का रोग, जल आदि का घात, क्रोध का प्रकोप, कफ का विकार और अन्तर्नाड़ी की व्यथा अर्थात् कोशे की बीमारी होवे ॥ १६४ ॥

वेधस्थाने रणे भङ्गो दुर्गे खण्डः प्रजायते ।
कविप्रवेशनं तत्र योधघातश्च तत्र वै ॥ १६५ ॥

विधे हुए स्थान में संग्राम करे तो भंग हो अर्थात् पूर्वादि काम से सर्वतोभद्रचक्र में जिस दिशा के नक्षत्रादि विधें उस दिशा से भंग होता है, ऐसे ही किला विधे तो खंडित हो, और विधे हुए स्थान में कवि प्रवेश करे अर्थात् बलवान् शत्रु पर मौका पाके अचानक धावा करे तो युद्ध से घाव पावे ॥ १६५ ॥

अस्तादिशाप्रकरणम् ।

यत्र पूर्वादिकाष्ठाया वृषराश्यादिगो रविः ।
सा दिशाऽस्तमिता ज्ञेया तिस्रः शेषाः सदोदिताः १६६

इस सर्वतोभद्रचक्र में वृष आदि तीन तीन राशि पूर्वादि दिशाओं में लिखी हैं अर्थात् वृष, मिथुन, कर्क पूर्व में ; सिंह कन्या, तुला दक्षिण में; वृश्चिक, धन, मकर पश्चिम में और कुम्भ, मीन, मेष उत्तर में लिखी हैं। उनमें से जिस दिशा की राशियों में सूर्य हो वह एक दिशा तीन महीनों तक अस्त हो जाती है और शेष नव राशियों की तीन दिशाएँ ९ महीनों तक सदा उदय रहती हैं ॥ १६६ ॥

ईशानस्थाः स्वराः प्राच्यां ज्ञेया आग्नेयगा यमे ।
नैर्ऋत्यस्थास्तु वारुण्यां सौम्यायां वायुगा मताः १६७

ईशानकोण में के स्वर पूर्व में, अग्निकोण में के स्वर दक्षिण में,

नैर्ऋत्यकोण में के स्वर पश्चिम में और वायव्यकोण में के स्वर उत्तर में अर्थात् ये स्वर इन दिशाओं के साथ अस्त होते हैं ॥१९७॥

नक्षत्राणि स्वरा वर्णा राशयस्तिथयो दिशः ।
ते सर्वेऽस्तंगता ज्ञेया यत्र भानुस्त्रिमासिकः ॥१९८॥

जिस दिशा की राशियों में सूर्य हो उस दिशा के नक्षत्र, स्वर, वर्ण, राशि, तिथि और दिशा ये सर्व तीन महीने तक अस्त हुए जानने । और शेष तीन दिशाओं के नक्षत्रादि ९ महीने तक उदय जानने ॥ १९८ ॥

नक्षत्रेऽस्ते रुजो वर्णे हानिः शोकः स्वरेऽस्तगे ।
राशौ विघ्नं तिथौ भीतिः पञ्चास्ते मरणं ध्रुवम् १९९॥

जिसका नक्षत्र अस्त हो तो रोग, वर्ण अस्त हो तो हानि, स्वर अस्त हो तो शोक, राशि अस्त हो तो विघ्न, तिथि अस्त हो तो भय और पाँचों ही अस्त हों तो निश्चय उसका मरण होता है ॥ १९९ ॥

यात्रा युद्धं विवादं च द्वारं प्रासादहर्म्ययोः ।
न कर्तव्यं शुभं चान्यदस्तवर्णादिके नरैः ॥ २०० ॥

जिनके नामादि अस्त हों उन मनुष्यों को अस्तदिशाभिमुख यात्रा, युद्ध, विवाद, महल वा घर का दरवाजा तथा और भी शुभ कर्म ऐसे अन्य अशुभ कर्म भी न करने चाहिये । क्योंकि ॥२००॥

अस्ताशायां स्थितं यस्य यदा नामाद्यमक्षरम् ।
तदा तु सर्वकार्येषु ज्ञेयो दैवहतो नरः ॥ २०१ ॥

जिस मनुष्य के नाम का आदि अक्षर जिस समय अस्तदिशा में स्थित हो, वह मनुष्य उस समय सर्व कामों में दैवहत (भाग्यहीन) हो जाता है ॥ २०१ ॥

संग्रहेऽस्तमिते विद्धे पापै चैव यदाक्षरे ।
सर्वेषां प्राणसन्देहः प्राणिनां जायते ध्रुवम् ॥२०२॥

यदि अस्तगत अक्षर पापग्रह से युक्त हो अर्थात् वह अक्षर नक्षत्र के जिस पाद का हो उसी पाद पर पापग्रह भी स्थित हो और उस अक्षर को किसी दूसरे पापी ग्रह का वेध हो तो उन सर्व प्राणियों को निश्चय प्राण रहने में सन्देह होता है ॥ २०२ ॥

कवौ कोटे तथा द्वंद्वे चतुरंगे महाहवे ।
उद्यमोऽस्तगतैर्योधैर्वर्जनीयो जयार्थिभिः ॥ २०३ ॥

कवियुद्ध (अचानक धावा करना), कोटयुद्ध (क़िले में लड़ना), द्वन्द्वयुद्ध (कुस्ती आदि), चतुरंगसेना (हाथी, घोड़े, रथ और पैदल) के युद्ध, और महान् संग्राम में विजय की इच्छा करनेवाले अस्तंगत योद्धाओं को उद्यम न करना चाहिये ॥ २०३ ॥

उदयास्तमनं तस्माच्चिन्तयेद्दैवविन्नरः ।
येन राजा स्वकीयैस्तु शत्रुभिर्नाभिभूयते ॥२०४॥

इस वास्ते राजा के ज्योतिर्विद् को चाहिये कि स्वराजा के अक्षरादि वर्ग का उदय और अस्त को यत्न से चिन्तवन करे, जिससे राजा अपने शत्रुओं से पराजय को प्राप्त न हो ॥ २०४ ॥

स्वराष्ट्राभ्युदयं ज्ञात्वा शत्रुराष्ट्रस्य संक्षयम् ।
ज्ञात्वा स्वलाभमत्यन्तं विदित्वा चोन्नतिंनृपः २०५॥

अपने राज्य का वर्ग उदय तथा शत्रु के राज्य का वर्ग क्षय (अस्त) और अपने को अत्यन्त लाभ जान के युद्ध करनेवाला राजाही वृद्धि को प्राप्त होता है ॥ २०५ ॥

दृष्ट्वा नामोदयं चक्रे जन्मराश्युदयं तथा ।
ग्रहानुकूलतां स्वस्य ज्ञात्वा दिग्विजयी भवेत् २०६

सर्वतोभद्रचक्र में अपने नाम के अक्षर का उदय तथा जन्म राशि का उदय और दूसरे ग्रहों की अनुकूलता को जाननेवाला (अर्थात् दैवज्ञ की आज्ञा में वर्तनेवाला) राजाही दिग्विजयी (अर्थात् सब दिशाओं के शत्रुओं को जीतनेवाला) होता है ॥ २०६ ॥

यद्दिशोऽस्तमितो वर्गस्तस्यां यात्रां नियोजयेत् ।
तत्र शत्रुबलं जित्वा क्षिप्रं राजा प्रवर्तते ॥ २०७ ॥

जिस दिशा का वर्ग (नक्षत्रादि) अस्त हो गया हो उस दिशा पर राजा युद्ध के वास्ते यात्रा करे तो वहां शत्रु के बल को जीत के शीघ्र ही उस राज्य को अपने स्वाधीन कर लेता है ॥ २०७ ॥

नृपवर्गेषु ये वर्णाः समानास्तमनोदयाः ।
मध्ये चान्ते भवेद्वेधो घातश्चापि भवेद्ध्रुवम् ॥२०८॥

यदि युद्ध करनेवाले दोनों राजाओं के वर्णादि वर्ग एकही समय अस्त व उदय हों तो अस्त समय को मध्य में वा अन्त में जिसके वर्णादि को क्रूर ग्रह का वेध होगा उसका निश्चय घात होता है ॥२०८॥

येषां वर्गोऽस्तमायाति तस्य यात्रा मता दिशि ।
शुभाशुभसमत्वे तु पूर्वयायी जयी भवेत् ॥२०९॥

यदि दोनों राजाओं का नक्षत्रादि वर्ग एकही समय अस्त हो तथा वेध भी शुभाशुभ ग्रहों का समान ही हो तो फिर जो राजा प्रथम चढ़कर जावेगा उसकी जय होगी ॥ २०९ ॥

नक्षत्रेऽभ्युदिते पुष्टिर्वर्णे लाभः स्वरे सुखम् ।
राशौ जयस्तिथौ तेजः पदाप्तिः पंचकोदये ॥२१०॥

नक्षत्र के उदय से पुष्टि, वर्ण से लाभ, स्वर से सुख, राशि से जय, तिथि से तेज और पांचोंही के उदय से अपूर्व पद की प्राप्ति होती है ॥ २१० ॥

उदिते मित्रलाभः स्याद्गृहवृद्ध्यर्थसंपदः ।
योधमुख्या प्रवर्तन्ते यान्ति नाशं तदारयः॥२११॥

वर्णादि के उदय से मित्र का लाभ, घर की वृद्धि तथा अर्थसंपत्ति होती है और मुख्य शूरवीर योद्धा युद्ध में जाके शत्रुओं का नाश करते हैं ॥ २११ ॥

प्रश्नलग्नप्रकरणम् ।

प्रश्नाक्षराद्ययद्वर्णं तद्वेधं प्राग्विचारयेत् ।
पापे स्यात्पापमुद्दिष्टं मुख्यबाध्यं तथा वदेत् ॥२१२॥

प्रश्नकर्ता के मुख से जो शब्द उच्चारण हों उनमें जो अक्षर प्रथम हो उसको किसी ग्रह का वेध है या नहीं इसका पहिले विचार करे ; क्योंकि वेध होने से उस प्रश्न का शुभाशुभ फल वेधकर्ता ग्रह के अनुसार होता है और जो वेध किसी का भी नहीं हो तो फिर उसका फल केरल के मतानुसार वा प्रश्नलग्नानुसार होता है ॥२१२॥

प्रश्नकाले भवेद्विद्धं यल्लग्नं क्रूरखेचरैः ।
तद्दुष्टं शोभनं सौम्यैर्मिश्रैर्मिश्रफलं मतम् ॥ २१३ ॥

प्रश्नकाल में जो लग्न क्रूर ग्रहों से विधा हो उसका फल दुष्ट, सौम्य ग्रहों से शुभ और क्रूर तथा सौम्य दोनों प्रकार के ग्रहों से मिश्र फल होता है ॥ २१३ ॥

ग्रहाऽभिन्नं तु यल्लग्नं फलं लग्नस्वभावतः ।
ज्ञातव्यं देशिकेन्द्रेण भाषितं यच्चरादिकम् ॥२१४॥

प्रश्नकाल में जो लग्न ग्रहों से विधा न हो तो उस लग्न का फल चरादि स्वभाव के अनुकूल जैसा ज्योतिर्विदों ने कहा है वैसा जानना चाहिये ॥ २१४ ॥

चरलग्नोदये नष्टं दुर्लभं रोगिणो मृतिः ।
जातस्यापि च तत्रैव स्वल्पमायुर्विनिर्दिशेत् ॥२१५॥

चर लग्न के समय में गई वस्तु मिलनी दुर्लभ, रोगी की मृत्यु और जन्मनेवाले की आयु थोड़ी होवे ॥ २१५ ॥

स्थिरलग्नोदये नष्टं स्वल्पकालेन लभ्यते ।
तत्र रोगी चिराद्भव्यो दीर्घायुर्लब्धजन्मवान् २१६॥

स्थिर लग्न के समय में गई वस्तु थोड़े काल से मिले, रोगी बहुत मुद्दत से सुखी होवे और जन्मनेवाले की आयु बहुत होवे ॥ २१६ ॥

नष्टस्य शीघ्रं लाभः स्याद्रोगी शीघ्रेण शोभनः ।
मध्यायुर्लब्धजन्मात्र द्विस्वभावोदयो ध्रुवम् २१७॥

द्विस्वभाव लग्न के समय में गई वस्तु जल्दी से मिले, रोगी जल्दी अच्छा होवे, और जन्मनेवाले की निश्चय मध्य आयु होवे ॥ २१७ ॥

एवं सर्वेषु कार्येषु प्रश्नकाले चरादिकम् ।
लग्नं विज्ञाय धीमद्भिर्निर्देष्टव्यं शुभाशुभम् ॥२१८॥

बुद्धिमान् लोग सर्व कामों में इस प्रकार प्रश्नकाल में लग्न के चरादि स्वभाव को जानके शुभाशुभ फल कहें ॥ २१८ ॥

चरलग्नाश्च चत्वारो मेषकर्कतुलामृगाः ।
वृषसिंहाऽलिकलशाः स्थिराः शेषा द्विसंज्ञकाः २१९

मेष, कर्क, तुला तथा मकर ये ४ लग्न चर; वृष, सिंह, वृश्चिक तथा कुम्भ ये ४ लग्न स्थिर और मिथुन, कन्या धन, मीन ये ४ लग्न द्विस्वभाव हैं ॥ २१९ ॥

उभयतोवेधप्रकरणम् ।

क्रूरैरुभयतो विद्धा यस्याऽक्षरतिथिस्वराः ।
राशिर्धिष्ण्यं च पंचापि तस्य मृत्युर्न संशयः २२० ॥

जिसके अक्षर, तिथि, स्वर, राशि और नक्षत्र इन पांचों को एक ही समय में दोनों ओर से दो क्रूर ग्रह वेधें अर्थात् एक दक्षिण दृष्टि से और दूसरा वामदृष्टि से, अथवा एक दक्षिण से और दूसरा संमुख से, अथवा एक वाम से और दूसरा संमुख से वेधे तो उसकी निश्चय मृत्यु होती है ॥ २२० ॥

एकवेधेऽर्थनाशः स्यात्स्थानभ्रंशोऽथवा भवेत् ।

नाम्ना चोभयविद्धेन पापाभ्यां निर्दिशेन्मृतिम् २२१

नाम को एक क्रूर ग्रह का वेध हो तो अर्थ का नाश, अथवा स्थान से भ्रष्ट, और दो क्रूर ग्रहों का दोनों ओर से वेध हो तो मृत्यु होती है ॥ २२१ ॥

कलहं चार्थनाशं च स्थानभ्रंशोऽथवा मृतिः ।
पापयोरुभयोर्वेधे पापयुक्तो भवेद्बुधः ॥ २२२ ॥

दो पापग्रहों के वेध से कलह, अर्थ का नाश, स्थान का भ्रंश अथवा मृत्यु होती है, और यही फल पापग्रहयुक्त बुध के वेध से भी होता है ॥ २२२ ॥

मंडलं नगरं ग्रामो दुर्गं देवालयं पुरम् ।
क्रूरैरुभयतो विद्धं विनश्यति न संशय ॥ २२३ ॥

जिस मंडल (प्रान्त वा जिला), नगर, पुर, ग्राम, दुर्ग (किला), और देवालय (मन्दिर आदि) को दोनों ओर से दो क्रूर ग्रह वेधें तो उसका निश्चय नाश होता है ॥ २२३ ॥

कूर्मचक्रोक्तदेशवेधप्रकरणम् ।

कृत्तिकादित्रिकाद्ये भे क्रूरविद्धे च कूर्मतः ।
देशा नाभिस्थदेशाद्या विनश्यन्ति यथाक्रमम् २२४

कूर्मचक्र में कृत्तिकादि तीन तीन नक्षत्रों को क्रम से नाभि आदि नव अंगों में विभाग किया गया है । उनमें से जिस अंग के नक्षत्र क्रूर ग्रह से विधें उस अंग के देश विनाश को प्राप्त होते हैं ॥ २२४ ॥

नक्षत्रवशाद्देशज्ञानम् ।

कृत्तिका रोहिणी सौम्यं कूर्मनाभिगतं त्रयम् ।
साकेतं मिथिला चंपा कौशांबिः कौशिकी तथा २२५

अहिच्छत्रं गया विंध्यमन्तर्वेदिश्च मेखला ।
कान्यकुब्जं प्रयागं च मध्यदेशो विनश्यति॥ २२६ ॥

कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिर ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के मध्य में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो साकेत देश, मिथिला, चंपा, कौशांबी, कौशिकी, अहिच्छत्र, गया, विंध्य, अन्तर्वेदि, मेखला, कान्यकुब्ज और प्रयाग इत्यादि मध्य देशों का नाश होता है ॥ २२५ । २२६ ॥

रौद्रं पुनर्वसुः पुष्यं कूर्मस्य शिरसि स्थितम् ।
सगौडो हस्तिबन्धश्च पञ्चराष्ट्रं च कामरुः ॥२२७॥
ऐन्द्रं चैव तथा ज्ञेयं मगधश्च तथैव च ।
रेवातटं च मेवासा पूर्वदेशो विनश्यति ॥ २२८ ॥

आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के शिर (पूर्व) में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो गौड़देश, हस्तिबन्ध, पंचराष्ट्र, कामरु, ऐन्द्र, मगध, रेवातट (नर्मदा का किनारा) और मेवास इत्यादि पूर्व के देशों का नाश होता है ॥ २२७ । २२८ ॥

आश्लेषा च मघा पूर्वा पादे वाग्नेयगोचरे ।
अंगो वंगः कलिंगश्च कुर्वजाश्चैव कोशलः ॥२२९॥
डहलाश्च जयन्द्राश्च तथा चैव स्तुलंजिका ।
उड्डियाणां वराटं च अग्निदेशो विनश्यति ॥२३०॥

आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के अग्निकोण के पाद में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो अंगदेश, वंग, कलिंग, कुर्वज, कोशल, डहल, जयन्द्र, तुलंजिक, उड़ीसा और वराट इत्यादि अग्निकोण के देशों का नाश होता है ॥ २२९ । २३० ॥

उत्तरा हस्तचित्रा च दक्षिणां कुक्षिमाश्रिताः ।
दर्दुरं च महेन्द्रं च वनवासं च सिंहलम् ॥ २३१ ॥

तापीभीमरथा लंका त्रिकुटं मलयस्तथा ।
श्रीपर्वतश्च किष्किंधा इति नश्यन्ति दक्षिणे ॥२३२॥

उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के दक्षिण की कुक्षि में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो दर्दुरदेश, महेन्द्र, वनवास, सिंहल, तापीनदी, भीमरथानदी, लंका, त्रिकूटपर्वत, मलयपर्वत, श्रीपर्वत और किष्किंधापर्वत इत्यादि दक्षिण के देशों का नाश होता है ॥ २३१ । २३२ ॥

स्वाती विशाखा मैत्रं च कूर्मे नैर्ऋतिगोचरे ।
नासिकं च सुराष्ट्रं च धृतं मालवकं तथा ॥ २३३ ॥
वह्लिं तथा प्रकाशं च भृगुं कच्छं च कोंकणम् ।
खेडापुरं च मोढेरं देशा नश्यन्ति तादृशाः ॥२३४॥

स्वाती, विशाखा और अनुराधा ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के नैर्ऋत्यकोण के पाद में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो नासिकदेश, सोरठ, धृत, मालव, वह्लि (वसही), प्रकाश, भृगु, कच्छ, कोंकण (मुंबई), खेड़ापूर, और मोढेर (मरहटादेश), इत्यादि नैर्ऋत्यकोण के देशों का नाश होता है ॥ २३३ । २३४ ॥

ज्येष्ठा मूलं तथाषाढा पुच्छे कूर्मस्य संस्थिताः ।
पारेतमर्बुदं कच्छमवन्तिं पूर्वमालवम् ॥ २३५ ॥
पारावतं बर्बरं च द्वीपं सौराष्ट्रसैन्धवम् ।
जलस्थाश्च विनश्यन्ति स्त्रीराज्यं पुच्छपीडने २३६

ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के पुच्छ- (पश्चिम) में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो पारेतदेश, अर्बुद (आबू), कच्छ, उज्जयिनी, पूर्वमालव, पारावत, बर्बर, सौराष्ट्रद्वीप, सिन्धुद्वीप, जलस्थदेश (टापू) और स्त्रीराज्य इत्यादि पश्चिम के देशों का नाश होता है ॥ २३५ । २३६ ॥

उत्तराषाढभात्रीणि पादे वायव्यगोचरे ।
गुर्जराह्वं यामुनं च मरुदेशं सरस्वतीम् ॥ २३७ ॥
जालंधरं वराटं च वालुकोदधिसंयुतम् ।
मेरुशृंगं विनश्यन्ति ये चान्ये कोणसंस्थिताः २३८

उत्तराषाढा, श्रवण और धनिष्ठा ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के वायव्यकोण के पाद में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो गुर्जरदेश, यामुन, मरुदेश (मारवाड़), सरस्वती, जालंधर, वराट, वालुका, समुद्र और मेरुशृंग इत्यादि वायव्यकोण के देशों का नाश होता है ॥ २३७ । २३८ ॥

शतभादित्रयं चैव उत्तरां कुक्षिमाश्रितम् ।
नेपालं कीरकाश्मीरं गज्जनं खुरसानकम् ॥ २३९ ॥
माथुरं म्लेच्छदेशश्च खशं केदारमण्डले ।
हिमाश्रयाश्च नश्यन्ति देशा ये चोत्तराश्रिताः २४०

शतभिषा, पूर्वाभाद्रपदा और उत्तराभाद्रपदा ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के उत्तर के कुक्षि में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो नेपाल देश, कीर, काश्मीर, गजनी, खुरासान, माथुर, म्लेच्छदेश, खश, केदारमंडल और हिमालय के आश्रित इत्यादि उत्तर के देशों का नाश होता है ॥ २३९ । २४० ॥

रेवती अश्विनी याम्यं पादे ईशानगोचरे ।
गंगाद्वारं कुरुक्षेत्रं श्रीकंठं हस्तिनापुरम् ॥ २४१ ॥
अश्वचक्रं कपादाश्च गजकर्णास्तथैव च ।
विनश्यन्ति चते सर्वे देशास्त्वीशानगोचरे २४२॥

रेवती, अश्विनी और भरणी ये तीन नक्षत्र कूर्मचक्र के ईशान के पाद में हैं। इनको क्रूर ग्रह का वेध हो तो गंगाद्वार देश, कुरुक्षेत्र, श्रीकंठ, हस्तिनापुर, अश्वचक्र, एकपाद और गजकर्ण इत्यादि ईशान के देशों का नाश होता है ॥ २४१ । २४२ ॥

यस्मिन् भागे संस्थिताः पापखेटा-
स्तद्भागस्था नाशमायान्ति देशाः ।
वेधस्थानं पीडयन्तीह नूनं
तत्रस्था वै सत्फलं दद्युरिष्टाः ॥ २४३ ॥

जिस अंग के नक्षत्रों पर क्रूर ग्रह स्थित हों उस अंग के देशों का अनेक प्रकार से नाश होता है । तथा जिस अंग के नक्षत्रों को क्रूर ग्रहों का वेध हो उस अंग के देशों में निश्चय किसी प्रकार से पीड़ा होती है । और जिस अंग के नक्षत्रों पर शुभ ग्रह स्थिर हों वा शुभ ग्रहों का वेध हो उस अंग के देशों में सर्व प्रकार से शुभ फल होता है । यदि मिश्रयोग हो तो मिश्रफल जानना २४३

पृथ्वीकूर्मः समाख्याता कृत्तिकादियमान्तकाः ।
देशादिः स्वस्वनक्षत्रादिरेष एव क्रमः स्मृतः ॥२४४॥

पूर्वोक्त पृथ्वीकूर्म में कृत्तिका को आदि लेके ३ । ३ नक्षत्रों से भरणी तक ९ विभाग किये । ऐसे ही देश, नगर, ग्राम और क्षेत्रादि के कूर्म में भी उस उसके नाम के नक्षत्र को आदि लेके ३ । ३ नक्षत्रों से पूर्वोक्त क्रम से ९ विभाग करे । फिर इनका वेध फल भी पूर्वोक्त विधि से जाने ॥ २४४ ॥

तौल्यं भाण्डं रसो धान्यं गजाऽश्वादिचतुष्पदम् ।
सर्वं महर्घतां याति यत्र क्रूरो व्यवस्थितः ॥२४५॥

जहां क्रूरग्रह की वेधव्यवस्था हो वहां तौल्य (तौल से बिकने के पदार्थ), भांड(रत्न), रस (मधुरादि), धान्य (गोधूमादि) और हाथी घोड़े आदि चौपाये, ये सर्व महर्घता को प्राप्त होते हैं, अर्थात् बहुत धन से भी दुर्लभ हो जाते हैं ॥ २४५ ॥

देशद्रव्याक्षरा ये च विद्धाः खेटैः शुभाशुभैः ।
सर्वतोभद्रचक्रे च विशेषात्तच्छुभाशुभम् ॥ २४६ ॥

देश और वस्तु इन दोनों के नाम के अक्षर को एक ही समय

शुभ ग्रह का वेध हो तो उस देश में वह वस्तु अधिक सस्ती और अशुभ ग्रह का वेध हो तो अधिक महँगी हो जाती है। यदि दोनों प्रकार के ग्रहों का वेध हो तो बलाधिक ग्रह का फल होता है। इसका विस्तार से निर्णय आगे अर्घप्रकरण में लिखेंगे ॥ २४६॥

जातिवेधप्रकरणम् ।

कृत्तिकायां तथा पुष्ये रेवत्यां च पुनर्वसौ ।
विद्धे सति क्रमाद्वेधो वर्णेषु ब्राह्मणादिषु ॥ २४७ ॥

कृत्तिका को वेध हो तो ब्राह्मणों की जाति को, पुष्य को वेध हो तो क्षत्रियों की जाति को, रेवती को वेध हो तो वैश्यों की जाति को और पुनर्वसु को वेध हो तो शूद्रों की जाति को वेध जानना ॥

ग्रन्थान्तरे जातिनक्षत्रम् ।

पूर्वात्रयं तथाग्नेयं ब्राह्मणानां प्रकीर्तितम् ।
उत्तरात्रितयं पुष्यं क्षत्रियाणां विनिर्दिशेत् ॥ २४८ ॥
पौष्णं मैत्रं मघा चैव प्राजापत्यं विशां स्मृतम् ।
आदित्यमाश्विनं हस्तं शूद्राणामभिजित्तथा २४९॥
विद्धैरेभिर्द्विजातीनां कारुकाणां च शेषके ।

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा तथा कृत्तिका ये ४ नक्षत्र ब्राह्मणों के; उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा तथा पुष्य ये ४ नक्षत्र क्षत्रियों के; रेवती, अनुराधा, मघा तथा रोहिणी ये ४ नक्षत्र वैश्यों के; पुनर्वसु, अश्विनी, हस्त तथा अभिजित् ये ४ नक्षत्र शूद्रों के कहे हैं; और शेष (बाकी रहे) नक्षत्र कारुक (शिल्पी) आदि नीच जातियों के माने हैं। अतः जिस नक्षत्र को वेध हो उस नक्षत्र की जाति को वेध जानना। परन्तु वेध शुभ ग्रह का हो तो शुभ और अशुभ ग्रह का हो तो अशुभ फल होता है ॥ २४८।२४९ ॥

उपग्रहप्रकरणम् ।

सूर्यभात्पञ्चमं धिष्ण्यं ज्ञेयं विद्युन्मुखाभिधम् २५०॥
शूलं चाष्टमभं प्रोक्तं सन्निपातं चतुर्दशम् ।
केतुरष्टादशे प्रोक्तं उल्का स्यादेकविंशतौ ॥ २५१ ॥
द्वाविंशतितमे कंपस्त्रयोविंशे च वज्रकम् ।
निर्घातश्च चतुर्विंशे उक्ताश्चाष्टावुपग्रहाः ॥ २५२ ॥

अश्विनी से रेवती पर्यन्त २७ नक्षत्रों में से जिस नक्षत्र पर सूर्य स्थित हो उससे ५ वें नक्षत्र पर विद्युन्मुख, ८ वें पर शूल, १४ वें पर सन्निपात, १८ वें पर केतु, २१ वें पर उल्का, २२ वें पर कम्प, २३ वें पर वज्र और २४ वें पर निर्घात ये आठ उपग्रह हैं। इसमें अभिजित् की गणना नहीं करनी चाहिये ॥ २५०।२५२ ॥

स्वस्थाने विघ्नदाः प्रोक्ताः सर्वकार्येषु सर्वदा ।
वर्जयेत्सर्वदर्क्षं तु यच्चोपग्रहसंभवम् ॥ २५३ ॥

ये सब कामों में सर्वदा विघ्न के देनेवाले होते हैं। अतः जिस नक्षत्र पर उपग्रह हो, उस नक्षत्रको सब कामों में वर्ज देना चाहिये, क्योंकि—॥ २५३ ॥

विद्युन्मुखे च पतनं शूले स्याद्रक्तपातनम् ॥
सन्निपाते ज्वरप्राप्तिः केतौ स्याद्देहपीडनम्॥२५४॥
उल्कायां तु भयं चैव कम्पे स्याच्छीततो भयम् ।
निर्घाते च विषप्राप्तिर्वज्रे शस्त्रभयं भवेत् ॥ २५५॥

विद्युन्मुख उपग्रह से ऊपर से गिरना, शूल उपग्रह से रुधिर का पात, सन्निपात उपग्रह से ज्वर की प्राप्ति, केतु उपग्रह से देह में पीड़ा, उल्का उपग्रह से किसी प्रकार का भय, कंप उपग्रह से शीत का भय, निर्घात उपग्रह से विष प्राप्ति और वज्र उपग्रह से शस्त्र का भय होता है ॥ २५४ । २५५ ॥

विद्युत्पुत्रविनाशं निवेदयति पतिवधं झटिति शूलः ।
दशमदिने सन्निपातः पत्युपघातं सदेवरं केतुः २५६॥
द्रव्यविनाशं चोल्का परपुरुषरतां करोति वज्राख्यः ।
कंपः स्थानविनाशं कुलसंहारं तु निर्घातः ॥२५७॥

यदि उपग्रह युक्त नक्षत्र में कन्या का विवाह करे तो यह फल होता है—विद्युन्मुख से पुत्र का नाश, शूल से पति का तत्काल वध, सन्निपात से दस दिनों में पति का घात, केतु से देवर का घात, उल्का से द्रव्य का नाश, वज्र से पर पुरुष का भोग, कंप से स्थान का नाश और निर्घात से कुल का संहार जानना ॥ २५६ । २५७ ॥

क्रूरवेधसमायोगे यस्योपग्रहसंभवः ।
तस्य मृत्युर्न संदेहो रोगाद्वाथ रणेऽपि वा ॥ २५८ ॥

जिसके नक्षत्रादि को क्रूरग्रह का वेध हो और जन्म नक्षत्र पर उपग्रह का भी संभव हो तो उस समय उस मनुष्य की चाहे संग्राम से चाहे रोग से निश्चय मृत्यु होती है ॥ २५८ ॥

उपग्रहशान्तिः ।

विद्युन्मुखो रविर्ज्ञेयः शूलश्चन्द्रः प्रकीर्तितः ।
सन्निपातः कुजो ज्ञेयो बुधःकेतुः प्रकीर्तितः ॥२५९॥
उल्का ज्ञेया सुराचार्यो वज्रं भार्गव उच्यते ।
कंपः शनैश्चरो ज्ञेयो राहुर्निर्घात एव च ।
यद्येनवर्तते विद्धं पूजां तस्य तु कारयेत् ॥ २६० ॥

विद्युन्मुख को सूर्य, शूल को चन्द्रमा, सन्निपात को मंगल, केतु को बुध, उल्का को बृहस्पति, वज्र को शुक्र, कंप को शनि और निर्घात को राहु कहा है । अतः क्रूरवेध के समय जिस उपग्रह का संभव हो उसके शान्त्यर्थ उसके उक्त ग्रह की पूजा आदि करे ॥ २५९ । २६० ॥

ग्रहलत्ताप्रकरणम् ।

द्वादशं च तृतीयं च षष्ठं चाष्टमकं क्रमात् ।
लत्तयन्ति पुरोधिष्ण्यं रविभौमार्यसूर्यजाः ॥ २६१ ॥

अश्विनी से रेवती पर्यन्त २७ नक्षत्रों में से जिस नक्षत्र पर ग्रह हो उस नक्षत्र से आगे के १२ वें नक्षत्र को सूर्य, तीसरे को मंगल, छठे को बृहस्पति और ८ वें को शनि लात से ताड़न करते हैं ॥ २६१ ॥

सप्तमे पञ्चमे धिष्ण्ये नवमे पृष्ठतः क्रमात् ।
बुधशुक्रस्तमो लत्तां द्वाविंशे पूर्णचंद्रमाः ॥ २६२ ॥

ऐसेही अपने वर्तमान नक्षत्र स्थान से पीछे के ७ वें नक्षत्र को बुध, ५ वें को शुक्र, ९ वें को राहु तथा केतु और २२ वें को पूर्णचन्द्रमा लात से ताड़न करते हैं । इसमें अभिजित् की गणना नहीं करनी ॥२६२॥

रणे मृत्युस्तथा भंगं यात्रायामनिवर्तनम् ।
विवाहे विधवा नारी भानि कुर्वन्ति लत्तया ॥ २६३ ॥

जिस नक्षत्र पर ग्रह की लात हो, उस नक्षत्र में युद्ध करने को जाय तो मृत्यु अथवा भंग हो, यात्रा करे तो पीछे नहीं आवे और विवाह करे तो स्त्री विधवा होवे ॥ २६३ ॥

सूर्ये तु वित्तहानिः स्यात्कुजराहुशनैश्चरैः ।
मरणं जीवलत्ताया बन्धुनाशो भवेत्ततः ॥ २६४ ॥
शुक्रेण कार्यविभ्रंशो ह्यनर्थः शशिसूनुना ।
चन्द्रेण च महात्रासो ज्ञेयः केतुस्तु राहुवत् ॥ २६५ ॥

सूर्य की लात से वित्त की हानि; मंगल, राहु तथा शनि की लात से मृत्यु; बृहस्पति की लात से बंधु का नाश; शुक्र की लात

से कार्य का नाश; बुध की लात से अर्थ की हानि; चन्द्रमा की लात से मोटा भय और केतु की लात का फल राहुवत् जाने ॥२६४।२६५॥

रविलत्तायुते भौमे स्थाननाशं धनक्षयम् ।
जन्मर्क्षे कुक्षिरोगं च चन्द्रयोगे महद्भयम् ॥२६६॥

मंगल से युक्त जन्म नक्षत्र पर सूर्य की लात हो तो स्थान का नाश, तथा कुक्षि में रोग होता है; और मंगल के साथ यदि चन्द्रमा भी हो तो महान् भय होता है ॥ २६६ ॥

कुजलत्तायुते सूर्ये गृहे भंगं धनक्षयम् ।
व्याधिशस्त्रादिपीडा च चन्द्रयोगे महद्भयम् ॥२६७॥

सूर्य से युक्त जन्म नक्षत्र पर मंगल की लात हो तो गृह का भंग, धन का नाश, रोग तथा शस्त्रादि से पीड़ा होती है; और सूर्य के साथ यदि चन्द्रमा भी हो तो महान् भय होता है ॥ २६७ ॥

शनिलत्तायुते सूर्ये रोगपीडा महद्भयम् ।
जन्मर्क्षे चौरबाधा च चन्द्रयोगे विशेषतः ॥२६८॥

सूर्य से युक्त जन्म नक्षत्र पर शनि की लात हो तो रोग से पीड़ा, महान् भय, तथा चौरों से कष्ट होता है; और सूर्य के साथ यदि चन्द्रमा भी हो तो यह फल विशेष होता है ॥ २६८ ॥

तथैव राहुकेत्वोश्च शनिवद्योजयेद्बुधः ।

जैसा शनि की लात का फल है, वैसा ही राहु तथा केतु की लात का फल पंडितों को जानना चाहिये ।

बुधलत्तायुते सूर्ये बुद्धिहानिर्न संशयः ॥ २६९ ॥
गुरुलत्तायुते सूर्ये रोगपीडा प्रजायते ।
शुक्रलत्तायुते सूर्ये स्त्रीहानिर्मूत्रकृच्छ्रकृत् ॥ २७० ॥

सूर्य से युक्त जन्म नक्षत्र पर बुध की लात हो तो निश्चय बुद्धि की हानि, गुरु की लात से रोग पीड़ा और शुक्र की लात से स्त्री की हानि तथा मूत्रकृच्छ्र रोग होता है ॥ २६९ । २७० ॥

वक्ष्यामि रविलत्तायां स्थितचन्द्रादितः फलम् ।
पित्तप्रकोपयात्रादि व्रणानि कुरुते शशी ॥ २७१ ॥
भूपुत्रश्चौरबाधां च वस्तुहेमादिनाशकृत् ।
वंधुवियोगमाप्नोति चन्द्रपुत्रफलं त्विदम् ॥ २७२ ॥
करोति नृपभीतिं च पशुं हानिं गुरुस्तदा ।
स्वस्त्रीवियोगमाप्नोति वस्त्रहानिश्च भार्गवे ॥ २७३ ॥
हेमरत्नमहिष्यादिधनधान्यहरोऽर्कजः ।
सर्वस्य नाशको राहुः केतुः शस्त्रभयप्रदः ॥ २७४ ॥

सूर्य की लात जन्म नक्षत्र पर हो और वहाँ चन्द्रमा हो तो पित्त का रोग, परदेश जाना आदि तथा व्रण रोग (फोड़ा फुनसी आदि) मंगल हो तो चोरों से कष्ट तथा सुवर्ण आदि वस्तुओं का नाश; बुध हो तो स्वजनों से वियोग, बृहस्पति हो तो राजा से भय तथा पशुओं की हानि; शुक्र हो तो अपनी स्त्री से वियोग तथा वस्त्रों की हानि; शनि हो तो सुवर्ण, रत्न, भैंसें, गायें आदि पशुओं का नाश, तथा धनधान्य का हरण; राहु हो तो सर्वस्व का नाश; और केतु हो तो शस्त्र का भय होता है ॥ २७१ । २७४ ॥

उपग्रहाश्च लत्ताश्च क्रूरखेटेन संयुताः ।
ऋजुगत्या व्याधिकरा वक्रगत्या मृतिप्रदाः ॥२७५॥

जिस नक्षत्र पर उपग्रह हो तथा ग्रह की लात हो उस नक्षत्र पर क्रूर ग्रह भी हो वह क्रूर ग्रह जो मार्गी हो तो रोग और वक्री हो तो मृत्यु करता है ॥ २७५ ॥

जन्मकर्मादिनक्षत्रप्रकरणम् ।

जन्मभं कर्म आधानं विनाशं सामुदायकम् ।
संघातिकमिदं धिष्ण्यं षट्कं सर्वजनीनकम् २७६॥

ज्ञातिदेशाभिषेकैश्च नव धिष्ण्यानि भूपतेः ।
वेधं ज्ञात्वा फलं ब्रूहि क्रूरे हानिं शुभे शुभम् २७७ ॥

जन्म, कर्म, आधान, विनाश, सामुदायिक और संघातिक ये छह नक्षत्र मनुष्यमात्र के हैं। और भूपति के ज्ञाति, देश तथा अभिषेक ये तीन नक्षत्र अधिक अर्थात् राजाओं के नव नक्षत्र हैं। इनको ग्रहों का वेध जान के क्रूर ग्रहों से हानि और शुभग्रहों से शुभ फल कहे ॥ २७६ । २७७ ॥

विवादं वा विवाहं वा दूरदेशान्तरं तथा ।
अन्यानि शुभकार्याणि वर्जनीयानि यत्नतः २७८ ॥

जिसके जन्मकर्मादि नक्षत्रों को क्रूर ग्रह का वेध हो उसे चाहिए कि—वह वाद-विवाद, विवाह, दूर देश की यात्रा तथा अन्य भी कोई शुभ कार्य न करे ॥ २७८ ॥

जन्मकर्मादिनक्षत्रज्ञानम् ।

जन्मभं जन्मनक्षत्रं दशमं कर्मसंज्ञकम् ।
एकोनविंशमाधानं त्रयोविंशं विनाशभम् ॥ २७६ ॥
अष्टादशं च नक्षत्रं सामुदायिकसंज्ञकम् ।
संघातिकं च विज्ञेयमृक्षं षोडशमत्र हि ॥ २८० ॥

जिस नक्षत्र में जन्म हो वह जन्मनक्षत्र, उस जन्मनक्षत्र से १० वां कर्म, १९ वां आधान, २३ वां विनाश, १८ वां सामुदायिक और १६ वां संघातिक नक्षत्र जानना। यदि जन्मकालज्ञान न हो तो फिर नाम के नक्षत्र से ही जन्मकर्मादि नक्षत्र जाने ॥ २७९ । २८० ॥

षड्विंशं राज्यजात्यं च जातिनाम स्वजातिभम् ।
देशभं देशनामर्क्षं राज्यर्क्षमभिषेकभम् ॥ २८१ ॥

जन्मनक्षत्र से २६ वां नक्षत्र राज्यजातिनक्षत्र, अथवा अपनी जाति के नाम का नक्षत्र हो वह जातिनक्षत्र है; देश के नाम का

नक्षत्र हो वह देशनक्षत्र है; और जिस नक्षत्र में राजा का राज्याभिषेक हुआ हो वह राज्यनक्षत्र है ॥ २८१ ॥

ग्रन्थान्तरे जात्यादिनक्षत्रम् ।

पञ्चविंशतिजातिश्च सप्तविंशाऽभिषेकभम् ।
षड्विंशतितमं देशं जन्मर्क्षादि शोधयेत् २८२ ॥

कोई ग्रन्थ में जन्मनक्षत्र से २५ वें नक्षत्र को जाति, २७ वें को अभिषेक और २६ वें को देशनक्षत्र माना है ॥ २८२ ॥

इत्येवं नव धिष्ण्यानां वेधं दृष्टिं विचिन्तयेत् ।

इस प्रकार से ये ९ नक्षत्र कहे; इनको ग्रहों का वेध तथा ग्रहों की दृष्टि का विचार करे ॥

मृत्युः स्याज्जन्मभे विद्धे कर्मभे क्लेश एव च ॥२८३॥
आधानर्क्षे प्रवासः स्याद्विनाशे बन्धुविग्रहः ।
सामुदायिकभेऽनिष्टं हानिः संघातिके तथा ॥२८४॥
जातिभे कुलनाशश्च बन्धनं चाभिषेकभे ।
देशर्क्षे देशभङ्गश्च क्रूरैरेवं शुभैः शुभम् ॥ २८५ ॥

जन्मनक्षत्र विधे तो मृत्यु, कर्मनक्षत्र विधे तो क्लेश, आधाननक्षत्र विधे तो प्रवास, विनाशनक्षत्र विधे तो बन्धु से विग्रह, सामुदायिक नक्षत्र विधे तो अशुभफल, संघातिक नक्षत्र विधे तो हानि, जातिनक्षत्र विधे तो कुल का नाश, अभिषेकनक्षत्र विधे तो राजा को बंधन और देशनक्षत्र विधे तो देश का भंग होता है । जैसे यह क्रूर ग्रहों के वेध का फल कहा वैसे ही शुभ ग्रहों के वेध से शुभफल कहना चाहिये ॥ २८३ । २८५ ॥

देशनक्षत्रपीडायां विरक्तं मातृमण्डलम् ।
आत्मदोषाद्विरोधश्च राष्ट्रमत्र च पीड्यते ॥ २८६॥

देश का नक्षत्र विधे तो मातृमण्डल (कुलदेव्यादि) विरक्त हो

(रक्षा त्याग देवें), राजा को स्वदोष से विरोध उत्पन्न हो, और प्रजा में पीड़ा भी हो ॥ २८६ ॥

पीडिते पुरनक्षत्रे भृत्यमंत्रिपुरोहिताः ।
पौराः श्रेण्यश्च नगरे वाहनं चोपतप्यते ॥ २८७ ॥

राजा के नगर के नाम का नक्षत्र विधे तो भृत्य (ओहदेदार वा नौकर), मंत्री (प्रधान), पुरोहित (कुलगुरु), पौर (नगरवासी लोग), श्रेणी (व्यापारी लोग) और वाहन (हाथी घोड़े) आदि पीड़ित होते हैं ॥ २८७ ॥

अथाभिषेकनक्षत्रे पीडिते वधबन्धनम् ।
राज्यभ्रंशं पुरीनाशं देशत्यागं विनिर्दिशेत् ॥ २८८ ॥

अभिषेकनक्षत्र विधे तो वध, बन्धन, राज्यभ्रंश तथा राज्यनगरी का नाश और देश का त्याग होगा ऐसा कहे ॥ २८८ ॥

उपग्रहसमायुक्ते मृत्युर्भवति नान्यथा ।

जन्मकर्मादि नक्षत्रों में से जिस नक्षत्र को क्रूर ग्रह का वेध हो और उसी नक्षत्र पर उपग्रह भी हो तो निश्चय मृत्यु होती है ॥

शुभग्रहेण युक्तं चेद्विपरीतफलं भवेत् ॥ २८९ ॥

परन्तु जन्मकर्मादि नक्षत्र शुभग्रह से युक्त हो तो पूर्वोक्त अशुभफल का विपरीत फल अर्थात् शुभ फल होता है ॥ २८९ ॥

सौम्यपापग्रहो हन्यान्नाम्नो व्याधिधनक्षयः ।
वेधे वैनाशिकाद्यर्क्षत्रिवेधे चायुषो भयम् ॥ २९० ॥

जन्मनक्षत्र को शुभग्रह का वेध हो तो व्याधि का नाश तथा क्रूर ग्रह का वेध हो तो धन का नाश होता है । और विनाश, सामुदायिक तथा संघातिक इन तीनों नक्षत्रों को क्रूर ग्रह का वेध हो तो आयुष्य का भय (अकाल मृत्यु) होता है ॥ २९० ॥

प्रकारान्तरेण जन्मकर्मादिनक्षत्रस्थितग्रहफलम् ।

जन्मर्क्षमाद्य दशमं च कर्म
संघातिकं षोडशभं प्रदिष्टम् ।

अष्टादशं चोदयभं विनाशं
त्रिविंशभं मानसपञ्चविंशतिः ॥ २६१ ॥

प्रथम जन्म नक्षत्र, उस जन्म नक्षत्र से १० व कर्म, १६ वां संघातिक, १८ वां उदय, २३ वां विनाश और २५ वां मानस है ॥ २६१ ॥

जन्मर्क्षगो यस्य खगो ग्रहेण
विहन्यते पञ्चविधोक्तया वा ।
मासेन मृत्युं प्रवदन्ति तस्य
गर्गादिमुख्या मुनयो नरस्य ॥ २६२ ॥

जिसके जन्मनक्षत्र पर ग्रह स्थित हो और वह ग्रह उक्त पांच प्रकार से हनन हो अर्थात् क्रूरविद्ध, क्रूरयुक्त, उपग्रह युक्त, ग्रहलत्ता-युक्त और क्रूरदृष्ट हो तो तिस मनुष्य का १ मास में मृत्यु होता है ऐसा गर्ग आदि श्रेष्ठ मुनि कहते हैं ॥ २६२ ॥

कर्मर्क्षगे वा प्रवदन्ति मृत्युं
मासद्वयेन त्रिदशाधिकेन ।
चतुष्पदाद्वाथ सरीसृपाद्वा
मार्गप्रपन्नस्य नरस्य तस्य ॥ २६३ ॥

कर्मनक्षत्र पर जो पूर्वोक्त योग हो तो चौपाये पशु से, वा जल के सर्प से, वा मार्ग में गिरने से २ मास और १३ दिनों में मृत्यु होता है ॥ २६३ ॥

संघातिकस्थस्त्रिभिरेव मासै-
र्दिनैर्यथा पञ्चभिरेव दत्ते ।
मृत्युं गतेन स्वगृहस्थितस्य
नरस्य मासंमुनिवाक्यमेतत् ॥ २६४ ॥

संघातिकनक्षत्र पर पूर्वोक्त योग हो तो अपने ही घर में ३ मास और ५ दिनों में अथवा १ ही मास में मृत्यु होता है ॥ २६४ ॥

मासैश्चतुर्भिश्च तथोदयर्क्षे
शस्त्रेण मृत्युं प्रददाति पुंसाम् ।
विषेण वा बन्धनकेन वापि
स्वयं विनश्येदपि देवराजः ॥ २६५ ॥

उदयनक्षत्र पर पूर्वोक्त योग हो तो शस्त्र से, वा विष से, बन्धन से, वा अपने ही निमित्त से ४ मासों में मृत्यु होता है, चाहे इन्द्र भी क्यों न हो ॥ २६५ ॥

वैनाशिकस्थः प्रददाति मृत्युः
क्षतेन रोगेण बुभुक्षया वा ।
दिनैस्त्रिभिः पञ्चभिरेव दक्षे
विदेशसंस्थस्य नरस्य मासम् ॥२६६॥

विनाशनक्षत्र पर पूर्वोक्त योग हो तो घाव लगने से, वा रोग से, वा भूखे मरने से ३ दिनों में वा ५ दिनों में विदेश में मृत्यु होता है ॥ २६६ ॥

मृत्युं तदा मानसगो नराणां
मासैश्चतुर्भिर्विदधाति खेटः ।
नानाविधै रोगगणैर्नितान्तं
विनाशयत्येव न संशयोऽत्र ॥ २६७ ॥

मानसनक्षत्र पर पूर्वोक्त योग हो तो अनेक प्रकार के रोगों से ४ मासों में निश्चय मृत्यु होता है ॥ २६७ ॥

जन्मर्क्षगो वा दिवसाधिनाथः
कर्मर्क्षगा भूमिजरात्रिनाथौ ।

मृत्युस्तदा शत्रुकृतान्निरोधात्
संपद्यते द्वादशरात्रिमध्ये ॥ २६८ ॥

जन्मनक्षत्र पर सूर्य तथा कर्मनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो शत्रु के बन्धन से १२ रात्रि में मृत्यु होता है ॥ २६८ ॥

कर्मर्क्षगो वा दिवसाधिनाथः
संघातिकस्थौ शशिभूमिपुत्रौ ।
मृत्युस्तदा तस्य भवेन्नरस्य
मासस्य मध्ये कथितो मुनीन्द्रैः ॥२६९॥

कर्मनक्षत्र पर सूर्य हो तथा संघातिक नक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो मुनियों ने १ मास में मृत्यु कहा है ॥ २६९ ॥

संघातिकस्थेन दिवाकरेण
मिथोदयस्थौ शशिभूमिपुत्रौ ।
मासत्रयेणैव भवेन्नरस्य
तस्यान्तरे वायुविकारजातः ॥ ३०० ॥

संघातिकनक्षत्र पर सूर्य हो तथा उदयनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो वायु के विकार से ३ मासों में मृत्यु होता है ३०० ॥

यदोदयर्क्षो दिवसाधिनाथो
वैनाशिकस्थौ शशिभूमिपुत्रौ ।
गुदस्य रोगेण तदा विनाशः
संपद्यते रक्तविकारजो वा ॥ ३०१ ॥

उदयनक्षत्र पर सूर्य हो तथा वैनाशिकनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो गुदा के रोग से वा रक्त के विकार से मृत्यु होता है ॥३०१॥

वैनाशिकस्थो यदि वासरेशो
मनःस्थितौ भूमिजरात्रिनाथौ ।

मृत्युस्तदा स्याद्दिवसत्रयेण
षण्मासयुक्तेन ध्रुवं नरस्य ॥ ३०२ ॥

वैनाशिकनक्षत्र पर सूर्य हो तथा मानसनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो ६ महीने और ३ दिन में मृत्यु होता है ॥ ३०२ ॥

मानर्क्षकस्थो यदि वासरेशो
जन्मर्क्षगौ भूमिजरात्रिनाथौ ।
तदा विनाशो मनुजस्य भावी
वर्षेण मासत्रयसंयुतेन ॥ ३०३ ॥

मानसनक्षत्र पर सूर्य हो तथा जन्मनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो एक वर्ष और ३ मासों में मृत्यु होता है ॥ ३०३ ॥

जन्मर्क्षगः स्याद्यदि भूमिपुत्रः
कर्मर्क्षगौ सूर्यनिशाधिनाथौ ।
चतुर्दिनैः स्यान्मरणं नरस्य
जलेन वा मासचतुष्टयेन ॥ ३०४ ॥

जन्मनक्षत्र पर मंगल हो तथा कर्मनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो ४ दिनों में वा ४ मासों में जल के योग से मृत्यु होता है ॥ ३०४ ॥

कर्मर्क्षगः स्याद्यदि भूमिपुत्रः
संघातिके रात्रिपवासरेशौ ।
भल्लूसकाशान्मरणं नरस्य
तथा भवेन्मासचतुष्टयेन ॥ ३०५ ॥

कर्मनक्षत्र पर मंगल हो तथा संघातिकनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो ४ मासों में रीछ से मृत्यु होता है ॥ ३०५ ॥

संघातिकस्थो यदि भूमिपुत्रः
सूर्यः शशिश्चोदयऋक्षयातौ ।

व्याधेः सकाशान्मरणं नरस्य
संवत्सराद्ये च भवेच्च नूनम् ॥ ३०६ ॥

संघातिकनक्षत्र पर मंगल हो तथा उदयनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो संवत्सर के आदि में निश्चय रोग से मृत्यु होता है ॥३०६॥

उदयर्क्षसंस्थो यदि भूमिपुत्रो
वैनाशिकस्थौ रविरात्रिनाथौ ।
अजीर्णतः स्यान्मरणं नरस्य
क्षुधाक्षयारोचकतः क्रमेण ॥ ३०७ ॥

उदयनक्षत्र पर मंगल हो तथा वैनाशिकनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो अजीर्ण वा मन्दाग्नि वा अरुचि से मृत्यु होता है ॥३०७॥

वैनाशिकस्थो यदि भूमिपुत्रः
सूर्यर्क्षपेशौ तु मनः प्रयातौ ।
व्याधेः सकाशान्मरणं नरस्य
संवत्सरान्ते भवतीह नूनम् ॥ ३०८ ॥

वैनाशिकनक्षत्र पर मंगल तथा मानसनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो रोग के होने से १ वर्ष में निश्चय मृत्यु होता है ॥ ३०८ ॥

मनःस्थितः स्याद्यदि भूमिपुत्रो
जन्मर्क्षगौ भास्कररात्रिनाथौ ।
प्राणादिघातश्च भवेन्नरस्य
षण्मासमध्ये कथितो मुनीन्द्रैः ॥ ३०९ ॥

मानसनक्षत्र पर यदि मंगल हो तथा जन्मनक्षत्र पर सूर्य और चन्द्रमा हो तो प्राणादि का घात ६ महीनों के भीतर मुनिजनों ने कहा है ॥ ३०९ ॥

जन्मर्क्षगः स्याद्यदि सूर्यसूनुः
कर्मर्क्षगौ भूमिजरात्रिनाथौ ।
मासैस्त्रिभिः स्यान्मरणं नरस्य
शस्त्रप्रहारैरथवाऽऽत्मघातैः ॥ ३१० ॥

जन्मनक्षत्र पर शनि हो तथा कर्मनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो शस्त्र के लगने से वा आत्मघात करने से ३ मास में मृत्यु होता है ॥ ३१० ॥

कर्मर्क्षगः स्याद्यदि सूर्यसूनुः
संघातिकस्थौ कुजरात्रिनाथौ ।
संवत्सरेण प्रवदन्ति मृत्युं
तथा नरस्याग्निसमुद्भवं च ॥ ३११ ॥

कर्मनक्षत्र पर शनि हो तथा संघातिकनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो १ वर्ष में अग्नि से मृत्यु होता है ॥ ३११ ॥

संघातिकस्थो यदि सूर्यसूनु-
स्तथोदयस्थौ कुजरात्रिनाथौ ।
मासैश्चतुर्भिर्दिवसैश्चतुर्भि-
स्तदा नरः स्यान्मरणे प्रसिद्धः ॥ ३१२ ॥

संघातिकनक्षत्र पर शनि हो तथा उदयनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो ४ मास और ४ दिनों में मृत्यु होता है ॥ ३१२ ॥

उदयर्क्षसंस्थो यदि सूर्यजः स्या-
द्वैनाशिकस्थौ कुजरात्रिनाथौ ।
तथाष्टमासप्रभवो हि मृत्यु-
र्भवेन्नरस्य प्रमदासकाशात् ॥ ३१३ ॥

उदयनक्षत्र पर शनि हो तथा वैनाशिकनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो स्त्री के कारण से ८ मासों में मृत्यु होता है ॥ ३१३ ॥

वैनाशिकस्थो यदि सूर्यपुत्रो
मनःस्थितौ भूमिजरात्रिनाथौ ।
तदाष्टमासावधिरेव मृत्यु-
र्वदेन्नरस्य क्षुधिताप्रकोपात् ॥ ३१४ ॥

वैनाशिकनक्षत्र पर शनि हो तथा मानसनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो क्षुधा के कोप से ८ मास में मृत्यु होता है ॥३१४॥

मनःस्थितः स्याद्यदि सूर्यपुत्रो
जन्मर्क्षसंस्थौ कुजरात्रिनाथौ ।
मासैश्च षड्भिर्मरणं नरस्य
तदा भवेद्रोगकृतं नरस्य ॥ ३१५ ॥

मानसनक्षत्र पर शनि हो तथा जन्मनक्षत्र पर मंगल और चन्द्रमा हो तो ६ मास में रोग से मृत्यु होता है ॥ ३१५ ॥

नक्षत्रवशाद् ग्रहदृष्टिप्रकरणम् ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि ग्रहदृष्टिफलं क्रमात् ।

जन्मकर्मादिनक्षत्रों के वेध तथा ग्रहयोग से फल कहने के उपरान्त अब नक्षत्रों पर ग्रहों की दृष्टि का विधान तथा दृष्टि का फल क्रम से कहता हूँ ।

सर्वे पञ्चदशर्क्षं तु वसुसप्तदशे कुजः ।
शराग्निमूर्च्छासार्कीज्यो दशमैकोनविंशतिः॥३१६॥
कविज्ञौ नवमर्क्षं तु राहुर्नव च वीक्षते ।
पञ्चर्क्षं वीक्ष्यते भानुरेवं दृष्टेर्विनिर्णयः ॥ ३१७ ॥

जिस नक्षत्र पर ग्रह हो उस नक्षत्र से १५ वें नक्षत्र को तो सूर्यादि सर्व ग्रह देखते हैं । तथा मंगल ७ वें, ८ वें और १० वें को ; शनि ३ रे, ५ वें और १९ वें को ; बृहस्पति १० वें और

१६ वें को; शुक्र तथा बुध ६ वें और १२ वें को; राहु ६ वें को; और सूर्य ५ वें नक्षत्र को देखता है ॥ ३१६ । ३१७ ॥

कालविशेषेण दृष्टिभेदज्ञानम् ।

शुभग्रहः शुक्लपक्षे ह्यग्रदृष्टिः सदा भवेत् ।
पश्चाद्दृष्टिः कृष्णपक्षे व्यत्ययं पापखेचराः ॥३१८॥

शुभग्रह शुक्लपक्ष में आगे की ओर; तथा कृष्णपक्ष में पीछे की ओर के और क्रूरग्रह शुक्लपक्ष में पीछे की ओर के तथा कृष्णपक्ष में आगे की ओर के उक्त नक्षत्रों को देखते हैं ॥ ३१८ ॥

पृष्ठदृष्टिर्दिवा क्रूरश्चाग्रदृष्टिस्तु रात्रिषु ।
विपरीतफलाः सौम्याः प्रचरन्ति खचारिणः॥३१९॥

क्रूरग्रह दिन में पीछे की ओर के तथा रात्रि में आगे की ओर के और शुभग्रह दिन में आगे की ओर के तथा रात्रि में पीछे की ओर के उक्त नक्षत्रों को देखते हैं ॥ ३१९ ॥

पूर्वाह्णे सद्ग्रहाश्चाग्रे त्वपराह्णे तु पृष्ठतः ।
शुभाश्चैव प्रपश्यन्ति विपरीतमसद्ग्रहाः ॥ ३२० ॥

शुभग्रह मध्याह्न के पहिले आगे की ओर के तथा मध्याह्न के पश्चात् पीछे की ओर के और क्रूरग्रह मध्याह्न के पहिले पीछे की ओर के तथा मध्याह्न के पीछे आगे की ओर के नक्षत्रों को पूर्वोक्त क्रम से देखते हैं ॥ ३२० ॥

यस्यर्क्षं भानुना दृष्टं तस्य भंगं विनिर्दिशेत् ।
चन्द्रदृष्टिश्च तारायां तस्य हानिर्न संशयः ॥ ३२१ ॥
कुजेन दृश्यते यस्य तस्य भंगो भवेद्ध्रुवम् ।
बुधेन दृश्यते यस्य तस्य लाभो भवेद्ध्रुवम् ॥३२२॥
गुरुदृष्टिर्गता यस्य तस्य लाभः शुभं भवेत् ।
भृगुदृष्टिर्यस्य तारा जयस्तत्र विनिर्दिशेत् ॥३२३॥

सौरिणा दृश्यते यस्य तस्य भंगं मृतिं वदेत् ।
राहुणा दृश्यते यस्य तस्य विघ्नं विनिर्दिशेत् ॥३२४॥

सूर्य की दृष्टि से युद्धादि से भंग, चन्द्रमा की दृष्टि से निश्चय हानि, मंगल की दृष्टि से निश्चय भंग, बुध की दृष्टि से निश्चय लाभ, बृहस्पति की दृष्टि से लाभ तथा शुभफल, शुक्र की दृष्टि से युद्धादि में जय, शनि की दृष्टि से भंग अथवा मृत्यु, और राहु की दृष्टि से विघ्न होता है ॥ ३२१ । ३२४ ॥

रविचन्द्रदृशौ यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ।
रविभौमदृशौ यस्य मृत्युस्तस्य विनिर्दिशेत् ॥३२५॥
रविसौम्यदृशौ यस्य तस्य भंगं पलायनम् ।
रविजीवदृशौ यस्य जयलाभसुखानि च ॥ ३२६ ॥
रविशुक्रदृशौ यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ।
रविः सौरिश्च जन्मर्क्षं पश्यते चैव मृत्युदः ॥ ३२७ ॥

सूर्य की दृष्टि के साथ चन्द्रमा की दृष्टि से निश्चय मृत्यु, मंगल की दृष्टि से भी मृत्यु, बुध की दृष्टि से युद्धादि से भंग तथा भागना, बृहस्पति की दृष्टि से जय लाभ तथा सुख, शुक्र की दृष्टि से निश्चय मृत्यु, और शनि की दृष्टि से भी मृत्यु होता है ॥ ३२५ । ३२७ ॥

चन्द्रभौमदृशौ यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ।
चन्द्रसौम्यदृशौ यस्य तस्य भंगं विनिर्दिशेत् ३२८॥
चन्द्रजीवदृशौ यस्य जयलाभो भवेद्ध्रुवम् ।
चन्द्रशुक्रदृशौ यस्य तस्य लाभोजयः शुभम्॥३२९॥
चन्द्रसौरिदृशौ यस्य तस्य भंगं मृतिं वदेत् ।

चन्द्र की दृष्टि के साथ मंगल की दृष्टि से निश्चय मृत्यु, बुध की दृष्टि से भंग, बृहस्पति की दृष्टि से निश्चय जय तथा लाभ, शुक्र की दृष्टि से लाभ, जय तथा शुभफल और शनि की दृष्टि से भंग अथवा मृत्यु होता है ॥ ३२८।३२९ ॥

कुजसौम्यदृशौ यस्य तस्य लाभं विनिर्दिशेत् ३३०॥
कुजजीवदृशौ यस्य युद्धे भंगं विनिर्दिशेत् ।
कुजशुक्रदृशौ यस्य तस्य सर्वार्थसिद्धयः ॥ ३३१ ॥
कुजसौरिदृशौ यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः ।

मंगल की दृष्टि के साथ बुध की दृष्टि से लाभ, बृहस्पति की दृष्टि से युद्ध में भंग, शुक्र की दृष्टि से सर्व अर्थों की सिद्धि और शनि की दृष्टि से निश्चय मृत्यु होता है ॥ ३३०।३३१ ॥

सौम्यजीवदृशौ यस्य तस्य भंगं मृतिं वदेत् ॥३३२॥
सौम्यशुक्रदृशौ यस्य तस्य लाभो जयो भवेत् ।
सौम्यसौरिदृशौ यस्य तस्य भंगं मृतिं वदेत् ॥३३३॥

बुध की दृष्टि के साथ बृहस्पति की दृष्टि से भंग तथा मृत्यु, शुक्र की दृष्टि से लाभ तथा जय और शनि की दृष्टि से भंग अथवा मृत्यु होता है ॥ ३३२ । ३३३ ॥

गुरुशुक्रदृशौ यस्य तस्य लाभो जयो भवेत् ।
गुरुसौरिदृशौ यस्य तस्य भंगं पराजयम् ॥ ३३४ ॥

बृहस्पति की दृष्टि के साथ शुक्र की दृष्टि से लाभ तथा जय और शनि की दृष्टि से युद्धादि में भंग तथा पराजय होता है ॥ ३३४ ॥

शुक्रसौरिदृशौ यस्य प्राणघातश्च जायते ।

शुक्र और शनि की दृष्टि से प्राणों का घात होता है ।

क्रूरग्रहचतुष्कं तु यस्य जन्मनि दृश्यते ।
सर्वभंगमवाप्नोति मरणं च प्रजायते ॥ ३३५ ॥

सूर्य, मंगल, शनि और राहु इन चारों ही क्रूर ग्रहों की दृष्टि से सर्व कामों में भंग अथवा मृत्यु होता है ॥ ३३५ ॥

शशिसौम्येज्यशुक्राश्च पश्यन्ति यस्य जन्मभम् ।

तस्य लाभोजयःसौख्यं धनधान्यविवर्धनम् ॥३३६॥

चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र इन चारों ही सौम्यग्रहों की दृष्टि से लाभ, जय, सुख और धनधान्य की वृद्धि होती है ॥ ३३६॥

शुभग्रहाणां या दृष्टिर्वक्रगत्याऽतिशोभना ।
समगत्या तु शुभदा दृष्टिः क्रूरखचारिणाम् ॥३३७॥

शुभग्रह वक्रगति में हो तो दृष्टिफल अति शुभ और क्रूरग्रह मध्यगति में हो तो दृष्टिफल शुभ होता है ॥ ३३७ ॥

दृष्टिर्या सौम्यखेटानां शीघ्रगत्या न शोभना ।
समगत्यामध्यफला निष्फला चास्तगामिनाम् ३३८

शुभग्रह शीघ्र गति में हो तो दृष्टिफल अशुभ, मध्यगति में हो तो दृष्टिफल मध्यम और अस्त हो तो दृष्टि फल नहीं होता ॥ ३३८ ॥

पापग्रहाणां दृष्टिर्या वक्रगत्या न शोभना ।
शीघ्रगत्या मध्यफला निष्फला चास्तगामिनाम् ३३९

क्रूरग्रह वक्रगति में हो तो दृष्टिफल अति अशुभ, शीघ्रगति में हो तो दृष्टिफल मध्यम और अस्त हो तो दृष्टिफल नहीं होता ॥

युद्धप्रकरणम् ।

भयं भङ्गश्च घातश्च बन्धो मृत्युः पुरःस्थितैः ।
क्रूरैरेकादिपञ्चान्तैर्युधि वेधे फलं भवेत् ॥ ३४० ॥

युद्ध के समय एक क्रूरग्रह के वेध से भय, दो से भंग, तीन से घात, चार से बंधन और पाँचों क्रूरग्रहों के वेध से मृत्यु होता है ॥

शनेर्घाते त्वचं मांसं रोमाणि च वपुष्मताम् ।
भौमघाते च रक्तौघो रविघातेऽस्थिभञ्जनम् ॥३४१॥
राहुघाते च सप्तापि नश्यन्ति धातवः समम् ।
सौम्यग्रहैर्न घातोऽस्ति जीव्यते प्रत्युत स्वयम् ३४२॥

घातकर्ता शनि हो तो योद्धा के अंग में मांस तथा रोमों का छेदन, मंगल हो तो रक्त का स्राव, सूर्य हो तो हड्डी का टूटना, और राहु हो तो सातों धातुओं का नाश होता है । तथा सौम्यग्रह के योग से घाव नहीं लगता; किन्तु स्वयं बच के आ जाता है ॥ ३४१ । ३४२ ॥

वेधफलपाककालज्ञानम् ।

तिथिमृक्षं स्वरं राशिं वर्णं चैव तु पञ्चकम् ।
यद्दिने विध्यते चन्द्रस्तद्दिने स्याच्छुभाशुभम् ३४३॥

तिथि, नक्षत्र, स्वर, राशि और अक्षर, इन पाँचों में से जिस किसी को ग्रह का वेध हो और पीछे से उसी को जिस दिन चन्द्रमा वेधे तब उसी दिन पूर्वोक्त शुभ वा अशुभ वेध फल होता है ॥ ३४३ ॥

एतत्सर्वं मया चोक्तं बहुशास्त्रस्य संग्रहात् ।
सर्वत्रैतद्योजयित्वा देशकालकुलादितः ॥ ३४४ ॥

ये पूर्वोक्त शुभाशुभ फल का विधान मैंने बहुत शास्त्रों से संग्रह करके इस ग्रन्थ में कहा, सो फल सर्वत्र ज्योतिर्विदों को स्वबुद्धि से देश, काल और कुलादि का विचार करके कहना चाहिये ॥३४४॥

अर्घप्रकरणम् ।

अथार्घ्यं संप्रवक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मयामले ।
एकाशीतिपदे चक्रे ग्रहवेधाच्छुभाशुभम् ॥३४५॥

मनुष्यादि को वेध फल कहने के अनन्तर इसी चक्र में क्रयविक्रय पदार्थों के अर्घ के शुभाशुभ खरीदने बेचने की वस्तुओं का भाव के सस्ते महँगेपन का निर्णय जैसा ब्रह्मयामल ग्रन्थ में कहा है वैसा ग्रहों के वेध से शास्त्रकारों ने कहा है सो मैं इस ग्रन्थ में कहता हूँ ॥ ३४५ ॥

देशः कालस्ततः पण्यमिति त्रीण्यर्घनिर्णये ।
चिन्तनीयानि वेध्यानि सर्वकालं विचक्षणैः ॥३४६॥

विचक्षण पुरुषों को अर्घनिर्णय के निमित्त वेध पाने योग्य देश, काल और पण्य ये तीनों सर्वदा विचारने योग्य हैं। अर्थात् कौनसी वस्तु का किस देश में और किस काल में क्या भाव होगा ॥ ३४६ ॥

देशकालपण्यनिर्णयः ।

देशोऽथ मण्डलं स्थानमिति देशस्त्रिधोच्यते ।
वर्षं मासो दिनं चेति त्रिधा कालोऽपि कथ्यते ॥३४७॥
धातुर्मूलं च जीवश्च इति पण्यं त्रिधा मतम् ।

देश, मंडल और स्थान के भेद से देश तीन प्रकार का है। वर्ष, मास और दिन के भेद से काल तीन प्रकार का कहा है। तथा धातु, मूल और जीव के भेद से पण्य भी तीन प्रकार का माना है ॥ ३४७ ॥

देशास्तु कूर्मचक्रोक्ता मण्डलं तदवान्तरम् ।
पुरादिस्थानमिति यत्त्रिधा देशविनिर्णयः ॥ ३४८ ॥

कूर्मचक्र में कहे हुए वह देश, प्रत्येक देश के अन्तर्गत जो प्रदेश (प्रान्त वा जिला) हो वह मंडल और प्रत्येक मंडल में जो ग्राम हो वह स्थान; ये तीन प्रकार का देश का भेद जानना ॥ ३४८ ॥

गुरुसंक्रान्तितो वर्षो मासो भास्करसंक्रमात् ।
दिनो वारोदयादेव त्रिधा कालविनिर्णयः ॥ ३४९ ॥

बृहस्पति की संक्रान्ति (राशिचार—एक राशि को भोगकर दूसरी राशि पर जाने) से वर्ष, सूर्य की संक्रान्ति से मास और सूर्योदय से दिन; ये तीन प्रकार का काल का भेद जानना ॥ ३४९ ॥

धातवो हेमभूम्यन्ता मूला वृक्षतृणान्तकाः ।

जीवा नरादिकीटान्तास्तद्विकारास्त एव च ॥३५०॥

सोने से आदि लेके मृत्तिका पर्यन्त—पृथ्वी में से निकलनेवाले संपूर्ण खनिज पदार्थों की धातु संज्ञा है। वृक्ष से आदि लेके तृण पर्यन्त—पृथ्वी में से उत्पन्न होनेवाले संपूर्ण उद्भिज्ज पदार्थों की मूलसंज्ञा है। मनुष्य से आदि लेके कीटपर्यन्त—स्थल, जल तथा अन्तरिक्ष में विचरनेवाले संपूर्ण प्राणियों की जीवसंज्ञा है। और इन तीनों में से जो जिसका विकार हो उसकी भी वही संज्ञा होती है। ये तीन प्रकार का पण्य अर्थात् खरीदने, बेचने की संपूर्ण वस्तुओं का भेद जानना ॥ ३५० ॥

देशादीनां स्वामिज्ञानम्।

अथ त्रिकत्रिकस्यास्य वक्ष्यामि स्वामिखेचरान् ३५१॥

तीन प्रकार का देश, तीन प्रकार का काल और तीन प्रकार का पण्य कहे। अब उन प्रत्येक के स्वामीग्रहों को कहते हैं ॥ ३५१ ॥

देशेशा राहुमन्देज्या मंडलस्वामिनः पुनः।
केतुसूर्यसिताः स्थाननाथाश्चन्द्रारचन्द्रजाः ॥३५२॥

देश का स्वामी राहु, शनि, बृहस्पति में से; मंडल का स्वामी केतु, सूर्य, शुक्र में से; और स्थान का स्वामी चन्द्र, मंगल, बुध में से जो बली हो वह होता है ॥ ३५२ ॥

वर्षेशा राहुकेत्वार्किजीवा मासाधिपाः पुनः।
भौमार्कज्ञसिता ज्ञेयाश्चन्द्रः स्याद्दिवसाधिपः ३५३ ॥

वर्ष का स्वामी राहु, केतु, शनि, बृहस्पति में से; मास का स्वामी मंगल, सूर्य, बुध, शुक्र में से; जो बली हो वह और दिन का स्वामी तो सदैवही चन्द्रमा होता है ॥ ३५३ ॥

धात्वीशाः सौरिपातारा जीवेशा ज्ञेन्दुसूरयः।
मूलेशाः केतुशुक्रार्का इति पण्याधिपा ग्रहाः ॥३५४॥

धातु का स्वामी शनि, राहु, मंगल में से; जीव का स्वामी बुध,

चन्द्र, बृहस्पति में से; और मूल का स्वामी केतु, शुक्र, सूर्य में से जो बली हो वह होता है ॥ ३५४ ॥

पुंग्रहा राहुकेत्वर्कजीवभूमिसुता मताः ।
स्त्रीग्रहो शुक्रशशिनौ सौरिसौम्यौ नपुंसकौ॥ ३५५ ॥

पुरुषसंज्ञावाले ग्रह, राहु, केतु, सूर्य, बृहस्पति, मंगल; स्त्रीसंज्ञा-वाले ग्रह शुक्र, चन्द्रमा; और नपुंसकसंज्ञावाले ग्रह शनि, बुध को माने हैं ॥ ३५५ ॥

सितेन्दू सितवर्णेशौ रक्तेशौ भौमभास्करौ ।
पीतौ सौम्यगुरू कृष्णा राहुकेत्वर्कजा मताः ३५६ ॥

श्वेतवर्ण के स्वामी शुक्र, चन्द्रमा; लाल वर्ण के स्वामी मंगल, सूर्य; पीले वर्ण के स्वामी बुध, बृहस्पति; और काले वर्ण के स्वामी राहु, केतु, शनि को माने हैं ।

अतः उपरोक्त पुरुषादि तथा श्वेतादि संज्ञा में से जिस संज्ञा की वस्तु हो उस संज्ञा के ग्रह का उस पर अधिकार रहता है । अर्थात् उस ग्रह की हानि-वृद्धि से उस वस्तु की भी हानि-वृद्धि होती है ॥ ३५६ ॥

बलवशात्स्वामिनिर्णयः ।

गृहे वक्रोदयोच्चर्क्षे यो यदा स्याद्बलाधिकः ।
देशादीनां स एवैकः स्वामी खेटस्तदा मतः॥३५७॥

देशादिकों के अपने अपन स्वामी ग्रहों में से जो ग्रह जिस समय क्षेत्र, वक्र उदय और उच्च इन चारों प्रकार के बलों में से अधिक बलवाला हो वही एक एक ग्रह उस समय देशादिक का स्वामी होता है । तात्पर्य इसका यह है कि जैसे वर्षपत्रिका में पंचाधिकारियों में से बलाधिक्य को वर्षेश माना है वैसे ही यहाँ ४ प्रकार के बलाधिक्यों को अपने अपने देश, काल पण्यादिक के स्वामी जानना ॥ ३५७ ॥

क्षेत्रादिचतुष्प्रकारेण बलनिर्णयः ।

(क्षेत्रबल ।)

स्वक्षेत्रस्थे बलं पूर्णं पादोनं मित्रभे गृहे ।
अर्धं समगृहे ज्ञेयं पादं शत्रुगृहे स्थिते ॥ ३५८ ॥

ग्रहों का स्थानबल ग्रह अपनी राशि पर हो तो पूर्ण-चार पाद, मित्र की राशि पर हो तो तीन पाद, सम की राशि पर हो तो दो पाद और शत्रु की राशि पर हो तो एक पाद बल होता है। किंतु यह बल उक्त राशियों के ठीक मध्य में हो तब यथोक्त पूर्ण होता है, और मध्य से जितना आगे वा पीछे रहे उतना बल त्रैराशिक के गणित से न्यून हो जाता है ॥ ३५८ ॥

(वक्र तथा उदयबल)

वक्रोदयस्वमानार्धे पूर्णवीर्यो ग्रहो भवेत् ।
तदग्रपृष्ठगे खेटे बलं त्रैराशिकान्मतम् ॥ ३५९ ॥

जितने दिन वक्री वा उदय रहें उसका आधा समय बीत जाने पर वक्री का वा उदय का मध्यकाल जानना, उस समय ग्रह पूर्ण बलवान् होता है। और उस मध्यकाल से जितना आगे वा पीछे रहे उतना बल त्रैराशिक के गणित से न्यून जानना; क्योंकि वक्री वा उदय होने के आदि और अन्त में वक्र का वा उदय का बल ० । ० अर्थात् कुछ भी नहीं होता ॥ ३५९ ॥

(उच्चबल ।)

उच्चांशस्थे बलं पूर्णं नीचांशस्थे बलं दलम् ।
त्रैराशिकवशाज्ज्ञेयमन्तरे तु बलं बुधैः ॥ ३६० ॥

ग्रह का उच्च राशि में परम उच्च अंश पर पूर्ण बल, तथा नीच राशि में परम नीच अंश पर आधा बल होता है। और इन दोनों के अन्तर में (बीच में) कहीं भी ग्रह हो तो उसका बल विद्वानों

को त्रैराशिक के गणित से जानना चाहिये; जैसा कि ज्योतिषी लोग जन्मपत्रिका आदि में ग्रहों का वल निकाला करते हैं ॥३६०॥

त्रैराशिकज्ञानम् ।

इच्छाफलसंगुणितं व्यवहृत्या भाजयेत्समस्ते च ।
व्यवहृतिगुणितं चेच्छाभक्तं त्रैराशिके भवेद्व्यस्ते ३६१

त्रैराशिक के दो भेद हैं—एक समस्त और दूसरा व्यस्त, पर इन दोनों का तात्पर्य एकही है । समस्त त्रैराशिक में जो कोई संख्यांक हो उसको इच्छित फल से गुणा करे और उसको व्यवहार की संख्या से भाग दे । तथा व्यस्त त्रैराशिक में व्यवहार की संख्या से गुणा करे और उसको इच्छा फल से भाग देना, इस तरह इष्ट अंक (फल) आता है उसको त्रैराशिक का गणित फल जाने । यह गणित का विषय है सो गणितज्ञों से जानना चाहिये ॥ ३६१ ॥

स्वामिवशाद्वेधफलनिर्णयः ।

एवं देशादिनाथा ये ते वेधकग्रहं प्रति ।
सुहृदः शत्रवो मध्याश्चिन्तनीयाः प्रयत्नतः ॥३६२॥

इस प्रकार से जो देश मंडलादिकों के पृथक् पृथक् स्वामी निश्चय किये वे ग्रह अपने देशादि के वर्णादिकों को वेध करनेवाले ग्रह के प्रति मित्र, शत्रु वा सम में से क्या हैं इसका यत्न से चिन्तवन करै ३६२

स्वमित्रसमशत्रूणां वेधे देशादिषु क्रमात् ।
शुभग्रहः शुभं धत्ते चतुस्त्रिद्व्येकपादकैः ॥ ३६३ ॥

देशमंडलादिकों का वेधकर्ता ग्रह शुभ हो तो इस क्रम से शुभ फल देता है । स्वामी स्वयं ही वेधकर्ता हो तो पूर्ण, वेधकर्ता का मित्र हो तो पौन; सम हो तो आधा और शत्रु हो तो चौथाई फल देता है ॥ ३६३ ॥

स्वमित्रसमशत्रूणां वेधे देशादिषु क्रमात् ।
दुष्टं दुष्टग्रहः कुर्यादेकद्वित्रिचतुष्पदैः ॥ ३६४ ॥

देशमंडलादिकोंका वेधकर्ता ग्रह अशुभ हो तो इस क्रम से अशुभ फल देता है। स्वामी स्वयं ही वेधकर्ता हो तो चौथाई, वेधकर्ता का मित्र हो तो आधा, सम हो तो पौन और शत्रु हो तो पूर्ण फल देता है ॥ ३६४ ॥

दृष्टिवशाद्वेधफलनिर्णयः ।

विद्धं पूर्णदृशा पश्यंस्तत्पादेन फलं ग्रहः ।
विदधात्यन्यथा ज्ञेयं फलं दृष्ट्यनुमानतः ॥ ३६५ ॥

वेधकर्ता ग्रह जिस वर्णस्वरादि को वेधै उस विधे हुए को (उसकी राशि को) पूर्णदृष्टि से देखे तो स्वमित्रादि का पूर्वोक्त पाद क्रम से जितना वेधफल कहा उतना पूरा देता है। और जो पूर्ण दृष्टि से न देखे, किंतु न्यून दृष्टि से देखे तो दृष्टि के तीन दो एक पाद के अनुसार फल कम देता है। जैसा आगे चक्र में लिखा है ॥३६५॥

स्वाम्यादिवेधकदृष्टिवशाद्वेधफलज्ञानचक्रम् ।

	सौम्यग्रहः				क्रूरग्रहः			
दृष्टिः	स्वामी	मित्रं	समः	शत्रुः	स्वामी	मित्रं	समः	शत्रुः
पूर्ण	२० ०	१५ ०	१० ०	५ ०	५ ०	१० ०	१५ ०	२० ०
तीनपाद	१५ ०	११ १५	७ ३०	३ ४५	३ ४५	७ ३०	११ ४५	१५ ०
दोपाद	१० ०	७ ३०	५ ०	२ ३०	२ ३०	५ ०	७ ३०	१० ०
एकपाद	५ ०	३ ४५	२ ३०	१ १५	१ १५	२ ३०	३ ४५	५ ०

राशिवशाद्ग्रहदृष्टिज्ञानम् ।

कर्माग्नी पंचनन्दौ च गजाब्धी सप्तमं तथा ।
पादवृद्ध्या निरीक्षन्ते ग्रहा लग्नानि सर्वदा ॥३६६॥

खतृतीये तु कोणस्थे चतुरस्त्रं यथाक्रमम् ।
सर्वदृष्ट्या प्रपश्यन्ति ग्रहा मन्दार्यभूसुताः ॥३६७॥

मेषादि द्वादश राशिचक्र में सूर्यादि ग्रह स्थित राशि स्थान से ३ । १० मी राशि को एक पाद से, ५ । ९ मी को दो पाद से, ४ । ८ मी को तीन पाद से और ७ मी को पूर्ण दृष्टि से सर्वदा देखते हैं । और शनि ३ । १० मीं को, बृहस्पति ५ । ९ मी को तथा मंगल ४ । ८ मी को भी पूर्ण दृष्टि से देखते हैं । इसका चक्र आगे लिखा है ॥ ३६६ । ३६७ ॥

राशिचक्रे ग्रहदृष्टिपादचक्रम् ।

दृष्टिः	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
एकपाद	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	०	३।१०	३।१०
दोपाद	५।९	५।९	५।९	५।९	०	५।९	५।९	५।९	५।९
तीनपाद	४।८	४।८	०	४।८	४।८	४।८	४।८	४।८	४।८
पूर्ण	७	७	४।८।७	७	५।९।७	७	३।१०।७	७	७

वर्णस्वरतिथ्युपरि दृष्टिज्ञानम् ।

वर्णादिस्वरराशीनां मेषाद्ये राशिमण्डले ।
ग्रहदृष्टिवशात्सोऽपि वेधो वर्णादिके मतः ॥ ३६८ ॥

विधे हुए वर्ण स्वरादिकों की जो राशि हो उस राशि पर मेषादि द्वादश राशि चक्र में वेधकर्ता ग्रह की जो दृष्टि हो वह दृष्टि उन विधे हुए वर्ण स्वरादिकों पर मानी है ॥ ३६८ ॥

स्वरवर्णाः स्वचक्रोक्तास्तिथिवेधे च पीडिताः ।
तिथिवर्णेषु यो राशिस्तद्दृष्टौ स्यात्तिथीक्षणम् ३६९

स्वरवर्ण चक्र में कहे स्वर और वर्ण की तिथि को वेध होने से वे स्वर और वर्ण भी वेधे जाते हैं । और उन तिथिवर्णों की राशि पर वेधकर्ता ग्रह की दृष्टि होने से उन वर्ण स्वर तिथि पर भी दृष्टि हो जाती है ॥ ३६९ ॥

अशुभो वा शुभो वापि शुक्ले विध्येत्तिथिं ग्रहः ।
सर्वं निजफलं दत्ते कृष्णपक्षे तु तद्दलम् ॥ ३७० ॥

वेधकर्ता ग्रह अशुभ हो चाहे शुभ हो परन्तु तिथि को शुक्लपक्ष में वेधे तो अपना पूर्वोक्त वेधफल जितना हो उतना पूर्ण देता है और कृष्णपक्ष में वेधे तो उसका आधा देता है ॥ ३७० ॥

खेटस्य स्वांशके ज्ञेया पूर्णा दृष्टिः सदा बुधैः ।

ग्रह की अपने नवांश पर सदैव पूर्ण दृष्टि होती है, अर्थात् जैसे राशि चक्र में मेषादि राशियों पर पादक्रम से न्यूनाधिक दृष्टि होती है । वैसे ही नवांश की राशियों पर भी पादक्रम से न्यूनाधिक दृष्टि होती है । परन्तु जिस नवांश की राशि का स्वामी दृष्टि देखनेवाला ग्रह ही होता हो फिर उसकी दृष्टि पाद क्रम से न्यून हो तो भी पूर्ण दृष्टि मानी है ।

दृष्टिहीने पुनर्वेधे न स्यात्किचिच्छुभाशुभम् ॥ ३७१ ॥

और वेधकर्ता ग्रह की दृष्टि के विना केवल वेध से कुछ भी शुभाशुभ फल नहीं होता । अर्थात् वेध तो वर्णादिकों पर हो और दृष्टि मेषादि राशि चक्र में उन विधे हुए वर्णादिकों की राशि पर हो तभी वेध फल होता है । किन्तु जितने पाद दृष्टि होगी उतने पाद ही वेध फल होगा ॥ ३७१ ॥

इत्येवं दृष्टिभेदेन निर्दिष्टं सकलं फलम् ।
वर्णादिपंचके विद्धे ग्रहोदत्ते शुभाशुभम् ॥ ३७२ ॥

इस प्रकार दृष्टि के भेद से सर्वफल कहा । वह फल वर्णादिकों को वेधकर्ता ग्रह शुभ हो तो शुभ और अशुभ हो तो अशुभ देता है ॥ ३७२ ॥

वेधफलविश्वानिर्णयः ।

सौम्यः पूर्णदृशा पश्यन् विध्यन् वर्णादिपंचकम् ।
फलं विंशोपकाः पंच क्रूरस्तु चतुरो दिशेत् ॥३७३॥

वेधकर्ता ग्रह वर्णादि पाँचों ही को वेधे और उनकी राशि को पूर्णदृष्टि से देखे तो सौम्यग्रह ५ विश्वा और क्रूरग्रह ४ विश्वा फल देता है। क्योंकि विश्वे २० ही माने हैं और सौम्यग्रह ४ हैं। अतः एक एक ग्रह ५।५ विश्वे देने से तथा क्रूर ह ५ हैं। अतः एक-एक ग्रह ४।४ विश्वे देने से २० विश्वे पूर्ण होते हैं ॥ ३७३ ॥

वेधो वर्णादिके यावत्स्थानवेधे च यावती ।
दृष्टिस्तदनुमानेन वाच्या विंशोपका बुधैः ॥ ३७४॥

वर्ण, स्वर, तिथि, नक्षत्र और राशि इन पाँचों में से जितनों को वेध हो और उनको राशि पर वेधकर्ता ग्रह की जितने पाद दृष्टि हो तदनुमान से विद्वानों को वेधफल के विश्वे कहने चाहिये। जैसे आगे के चक्र में लिखे हैं ॥ ३७४ ॥

वर्णादिवेधेदृष्टिवशाद्विश्वाज्ञानचक्रम् ।

वर्णादि पांच में से										
	सौम्यग्रहः					क्रूरग्रहः				
दृष्टि	एकको	दोको	तीनको	चारको	पांचको	एकको	दोको	तीन को	चार को	पांच को
पूर्ण	१ ०	२ ०	३ ०	४ ०	५ ०	० ४८	१ ३६	२ २४	३ १२	४ ०
तीनपाद	० ४५	१ ३०	२ १५	३ ०	३ ४५	० ३६	१ १२	१ ४८	२ १८	३ ०
दोपाद	० ३०	१ ०	१ ३०	२ ०	२ ३०	० २४	० ४८	१ १२	१ ३६	२ ०
एकपाद	० १५	० ३०	० ४५	१ ०	१ १५	० १२	० २४	० ३६	० ४८	१ ०

एवं विंशोपका यत्र संभवन्ति शुभाशुभाः ।
अन्योन्यं शोधयेत्तेषां शेषं ज्ञेयं शुभाशुभम् ॥ ३७५ ॥

इस प्रकार से जहां शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के ग्रहों के पृथक्-पृथक् विश्वे प्राप्त हों तो उनको परस्पर अन्तर करे। उस अन्तर से शेष विश्वे शुभ ग्रहों के हों तो शुभ और क्रूर ग्रहों के हों तो अशुभ जाने ॥ ३७५ ॥

विंशोपकावशात्समर्घमहर्घनिर्णयः ।

वर्तमानार्घविंशांशाः कल्पनास्तेषु च क्रमात् ।
वर्तमानार्घके देयाः पात्याश्चैव शुभाशुभे ॥ ३७६ ॥

जिस वस्तु का वेध से अर्घनिर्णय करे उस वस्तु का वर्तमान में (अर्थात् वर्ष मास तथा दिन में से जिस समय का निर्णय करना हो उसके प्रवेश समय में) जो अर्घ (भाव) हो उसके २० विश्वे अर्थात् २० भाग कल्पना करे। उस १ भाग के तुल्य पूर्वोक्त १ विश्वे को माने। फिर पूर्वोक्त क्रम से प्राप्त शेष विश्वे जो शुभ ग्रहों के हों तो वर्तमान अर्घ के २० भागों में मिलावे और अशुभ ग्रहों के हों तो उनमें से निकाले। ऐसा करने से २० से जितने अधिक हों उतने विश्वे वस्तु समर्घ (मन्दी) और निकालने से २० से जितने न्यून हों उतने विश्वे वस्तु महर्घ (तेजी) वर्तमान के भाव से अर्घ-निर्णय के अखीर समय तक में जाने। क्योंकि वस्तु के विश्वे बढ़ें तो वस्तु की वृद्धि और मूल्य की हानि, और जो वस्तु के विश्वे घटें तो वस्तु की हानि और मूल्य की वृद्धि होती है ॥ ३७६ ॥

अर्घभेदज्ञानम् ।

त्रिविधानां तु पण्यानां ह्यर्घभेदाश्चतुर्विधाः ।
सेतिकामानपल्लीभिः संख्यया च तथैव हि ॥ ३७७ ॥

तीन प्रकार के भेद से माने पण्यों अर्थात् खरीदने बेचने की सम्पूर्ण वस्तुओं के अर्घ (भाव) सर्वत्र चार ही प्रकार से होते

हैं। किसी का माप से, किसी का तोल से, किसी का पायली से और किसी का गिनती से; पर इन प्रत्येक के दो भेद हैं। एक भाव; दूसरा मूल्य अर्थात् अमुक द्रव्य से इतनी वस्तु मिले इसको भाव और अमुक वस्तु का इतना द्रव्य लगे इसको मूल्य कहते हैं। अतः जिस वस्तु का भाव वा मूल्य पूर्वोक्त चार प्रकार में से जिस प्रकार से हो उस वस्तु के सस्ते महँगेपन का उसी प्रकार से निर्णय करे ॥ ३७७ ॥

प्रकारान्तरेणार्घनिर्णयः ।

अब अन्य प्रकार से अर्थात् नक्षत्र मास के वेध से ही वस्तु विशेष का अर्घ निर्णय कहते हैं।

सौम्यवेधे समर्घत्वं क्रूरवेधे महर्घता ।
देशः कालश्च वस्तूनि ग्रहवेधाद्विचारयेत् ॥ ३७८ ॥

सौम्य ग्रह के वेध से समर्घ और क्रूरग्रह के वेध से महर्घ होता है। अतः देश, काल और वस्तु इन तीनों का विचार ग्रहों के वेध मे प्रत्येक नक्षत्रवश से करे ॥ ३७८ ॥

व्रीहियवाश्च मणयो हीरका धातवस्तिलाः ।
कृत्तिकावेधतो मासानष्ट याम्यदिशेऽसुखम् ॥३७९॥

कृत्तिका नक्षत्र को वेध हो तो चावल, जव, मणि, हीरा धातु और तिल इनको दक्षिण दिशा में ८ महीने में फल होता है ॥ ३७९ ॥

रोहिण्याः सर्वधान्यानि सर्वे रसाश्च धातवः ।
जीर्णा कंबलकाः प्राच्यामसुखं दिनसप्तकम्॥३८०॥

रोहिणी को वेध हो तो सब धान्य, सब रस, सब धातु और पुराने ऊनके वस्त्र को पूर्वदिशा में ७ दिन फल होता है ॥३८०॥

मृगशीर्षेऽश्वमहिषी गावो लाक्षादिकोद्रवाः ।
खरा रत्नानि तूरिश्चोदकपीडा षष्टिवासरान् ॥३८१॥

मृगशिर को वेध हो तो घोड़े, भैंसें, गायें, लाख आदि, कोदों धान्य, गर्दभ, रत्न और तुवर को उत्तर दिशा में २ महीने फल होता है ॥ ३८१ ॥

आर्द्रायां तैललवणसर्वक्षाररसादथः ।
श्रीखंडादिसुगंधीनि मासं स्यात्पश्चिमोऽसुखम् ३८२

आर्द्रा को वेध हो तो तेल, लवण, सब क्षार, रसादिक और चन्दन आदि सुगंधी वस्तु को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥ ३८२ ॥

पुनर्वसोः स्वर्णरूप्ये कपसिश्च युगंधरी ।
कुसुंभं श्यामकौशेयं मासयुग्मोत्तरे सुखम् ॥३८३॥

पुनर्वसु को वेध हो तो सोना, रूपा, कपास, युगंधरी (जुवार वा बाजरी), कुसुंभ और श्याम रेशमी वस्त्र को उत्तर में २ मास फल होता है ॥ ३८३ ॥

पुष्ये स्वर्णं घृतं रूप्यं शालिशोचलसर्षपाः ।
सर्जिका तैलहिंग्वादि याम्ये पीडाष्टमासिकी ३८४॥

पुष्य को वेध हो तो सोना, घत, रूपा, चावल, सौंचरनमक, सरसों, सज्जी, तैल और हींग आदि को दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥ ३८४ ॥

आश्लेषायां च मंजिष्ठा इक्षुगोधूमशुंठिकाः ।
मरिचं कोद्रवाः शाली मासिकंपश्चिमे सुखम् ३८५॥

आश्लेषा को वेध हो तो मजीठ, सेलडी (गुड़खाँड), गेहूँ, सुंठी, मिर्च, कोदों, धान्य और चावल को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥ ३८५ ॥

मघायां तिलतैलाज्यप्रवालचणकाऽतसी ।
गुडः कंगुर्दक्षिणस्यां विग्रहश्चाष्टमासिकी ॥३८६॥

मघा को वेध हो तो तिल, तेल, घृत, प्रवाल, चणा, अलसी, गुड़ और कांगुनी को दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥ ३८६ ॥

पूफायां कंबलोर्णादि युगंधरीतिलास्तथा ।
रजतं वस्तु कल्याणं याम्यां पीडाष्टमासिकी ३८७॥

पूर्वाफाल्गुनी को वेध हो तो ऊन आदि, कंबल, युगंधरी, तिल, रूपे की वस्तु और कल्याण इनका दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥ ३८७ ॥

उफायां माषमुद्गाद्यं तंदुलाः कोद्रवाः पुनः ।
सैंधवं लशुनं सर्जि मासे युग्मोत्तरे यथा ॥ ३८८ ॥

उत्तराफाल्गुनी को वेध हो तो उड़द, मूंग आदि, चावल, कोदों, सैंधव, लहसन और सज्जी को, उत्तर में २ मास फल होता है ॥ ३८८ ॥

हस्ते श्रीखण्डकर्पूरदेवकाष्ठागरुस्तथा ।
रक्तचन्दनकंदादि मासयुग्मोत्तरे सुखम् ॥ ३८९ ॥

हस्त को वेध हो तो चंदन, कपूर, देवदारु, अगर, लालचंदन और कंद आदि को उत्तर में २ मास फल होता है ॥ ३८९ ॥

चित्रायां स्वर्णरत्नानि मुद्गमाषप्रवालकम् ।
अश्वादिवाहनं मासद्वयपीडोत्तरां दिशि ॥ ३९० ॥

चित्रा को वेध हो तो सोना, रत्न, मूंग, उड़द, प्रवाल और घोड़ा आदि वाहन को उत्तर में २ मास फल होता है ॥ ३९० ॥

स्वातौ पूगं मरिचं सर्षपतैलादि राजिका हिंगुः ।
खर्जूरादिकपीडा सप्तदिनान्युत्तरे देशे ॥ ३९१ ॥

स्वाती को वेध हो तो सुपारी, मिर्च, सरसों, तेल आदि, राई, हींग और खर्जूरादि को उत्तर में ७ दिन फल होता है ॥ ३९१ ॥

विशाखायां यवाः शालिगोधूमा मुद्गराजिका ।

मसूरान्नमकुष्ठा च याम्यपीडाष्टमासिकी ॥ ३६२ ॥

विशाखा को वेध हो तो जव, चावल, गेहूँ, मूंग, राई, मसूर, धान्य और मोठ को दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥३६२ ॥

राधायां तुवरी सर्वविदलान्नं च तण्डुलाः ।
मकुष्ठाश्चैव चणकाः प्राक्पीडा दिनसप्तकम् ॥३६३॥

अनुराधा को वेध हो तो तुवर, विना दल के सर्व अन्न, चावल, मोठ और चनों को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ३६३ ॥

ज्येष्ठायां गुग्गुलुगुडलाक्षाकर्पूरपारदाः ।
हिंगुहिंगुलुकांस्यानि प्राक्पीडा दिनसप्तकम् ३६४॥

ज्येष्ठा को वेध हो तो गुग्गुलु, गुड, लाख, कपूर, पारा, हींग, हिंगुलु और कांसी को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ३६४ ॥

मूले श्वेतानि वस्तूनि रसा धान्यानि सैंधवम् ।
कार्पासलवणाद्यं च मासिकं पश्चिमे सुखम् ॥३६५॥

मूल को वेध हो तो सब श्वेत वस्तु, रस, धान्य, सेंधालोन, कपास और लवण आदि को पश्चिम में १ मासफल होता है ॥ ३६५ ॥

पूषायामंजनतुषधान्यघृतं कंदमूलजूर्णादि ।
वेद्यं सशालिपश्चिमदिशिमासिकमशुभमन्यद्वा ३६६

पूर्वाषाढा को वेध हो तो सुरमा, तुषधान्य, घृत, कंद, मूल, जूर्ण (तृण) आदि और चावल को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥३६६॥

उषायामश्ववृषभगजलोहादिधातवः ।
सर्वं च सारवस्त्वाज्यं प्राग्व्यथा दिनसप्तकम् ॥३६७॥

उत्तराषाढा को वेध हो तो घोड़ा, बैल, हाथी, लोह आदि धातु, सब सारवस्तु और घृत को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ३६७ ॥

द्राक्षाखर्जूरपूगैला मुद्गा जातिफलं हयाः ।

अभिजिद्वेधतः पूर्वोऽन्यथा वा दिनसप्तकम् ॥ ३९८॥

अभिजित् को वेध हो तो दाख, खजूर, सुपारी, इलायची, मूंग, जायफल और घोड़ों को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ३९८ ॥

श्रवणेऽखोडचार्वालिपिप्पलीपूगमालिका ।
तुषधान्यानि वेध्यानि प्राक् शुभं सप्तवासरान् ३९९

श्रवण को वेध हो तो अखरोट, चिरोंजी, पिप्पली, सुपारी का बगीचा और तुषधान्य को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ३९९ ॥

धनिष्ठायां स्वर्णरूप्यधातवः सर्वनाणकम् ।
मणिमौक्तिकरत्नानि सप्ताहं पूर्वतोऽशुभम् ॥४००॥

धनिष्ठा को वेध हो तो सोना, रूपा, धातु तथा सर्वप्रकार का नाणा (रुपये पैसे आदि), मणि, मोती और रत्न को पूर्व में ७ दिन फल होता है ॥ ४०० ॥

तैलकोद्रवमद्यादि धातकीपत्रमूलकम् ।
छल्लीशतभिषग्वेधं वारुण्यां मासिकं शुभम् ॥४०१॥

शतभिषा को वेध हो तो तेल, कोदों, मद्य आदि अर्क, आंवला, पत्र, मूल और छाल को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥ ४०१ ॥

प्रियंगुमूलजात्यादि सर्वधान्यानि धातवः ।
सर्वौषधं देवदारु याम्यां पीडाष्टमासिकी ॥ ४०२ ॥
पूर्वाभाद्रपदे वेध्यम्—

पूर्वाभाद्रपदा को वेध हो तो प्रियंगु, मूल, जावित्री आदि सब धान्य, सब धातु, सब औषधि और देवदारु को दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥ ४०२ ॥

—अथोभावेधमुच्यते ।

गुडः खंडा शर्करा च खलं तिलाश्च शालयः ।
घृतं मणिमौक्तिकानि वारुण्यां मासिके शुभम् ४०३

उत्तराभाद्रपदा को वेध हो तो गुड़, खांड़, शक्कर, खली, चावल, घृत, मणि और मोती को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥ ४०३ ॥

पौष्णे श्रीफलपूगादि मौक्तिकं मणयोऽपि च ।
छेडाक्रियाणकं सर्वं वारुण्यां मासिके शुभम् ४०४॥

रेवती को वेध हो तो नारियल, सुपारी आदि, मोती, मणि, छेड़ा और सब किराणा को पश्चिम में १ मास फल होता है ॥ ४०४ ॥

अश्विन्यां व्रीहयो जूर्णा वेसरोष्ट्रघृतादिकम् ।
सर्वाणि धान्यवस्त्राणि मासद्वयोत्तरं व्यथा ॥४०५॥

अश्विनी को वेध हो तो चावल, जूर्ण (तृण), खच्चर, ऊँट, घृत आदि सर्वप्रकार के धान्य और सर्वप्रकार के वस्त्र को उत्तर में २ मास फल होता है ॥ ४०५ ॥

भरण्यां तुषधान्यानि युगन्धरी च वेध्यते ।
मरिचाद्यौषधं सर्वं याम्यां पीडाष्टमासिकी ॥४०६॥

भरणीनक्षत्र को वेध हो तो तुषधान्य, युगंधरी और मिर्च आदि सर्वऔषधि को दक्षिण में ८ महीने फल होता है ॥ ४०६ ॥

देशोत्पातप्रकरणम् ।

देवध्वंसः प्रजापीडा नृपविप्रवधस्तथा ।
यत्राऽवृष्टिश्च तत्र स्याद्दुर्भिक्षं मण्डले स्फुटम् ॥४०७॥

जिस मण्डल में देवता की प्रतिमा का नाश, प्रजा में पीड़ा, राजा का अथवा ब्राह्मण का वध और वृष्टि का अभाव हो उस मण्डल में दुर्भिक्ष होता है ॥ ४०७ ॥

अकालेऽपि फलं पुष्पं वृक्षाणां यत्र जायते ।
स्वजातिमांसभुक्तिश्च दुर्भिक्षं तत्र रौरवम् ॥ ४०८॥

विना समय वृक्षों के फल तथा फूल लगे, और बिल्ली, उंदर,

श्वान, सर्प तथा मच्छी इन पांचों के सिवाय कोई भी जन्तु अपनी स्वजाति के जीवों का मांस भक्षण करे तो उस मण्डल में दुर्भिक्ष होता है ॥ ४०८ ॥

परचक्रागमस्तत्र विग्रहश्च स्वराज्यके ।
ऋतोर्विपर्ययो यत्र दुर्भिक्षं मण्डले भवेत् ॥ ४०९ ॥

किसी शत्रु की सेना युद्ध करने को आवे, अथवा अपने राज्य में ही विग्रह हो और ऋतु की विपरीतता अर्थात् शीतकाल में उष्णता वा उष्णकाल में शीतता इत्यादि हो उस मास में दुर्भिक्ष होता है ॥ ४०९ ॥

भूमिकंपो रजःपातो रक्तवृष्टिश्च जायते ।
देशे सर्वसुखोपेते वेधादेवं वदेद्बुधः ॥ ४१० ॥

भूमिकंप, धूलीवर्षा और रुधिरादि की वर्षा हो उस मण्डल में भी दुर्भिक्ष होता है । ये पूर्वोक्त फल पण्डितों को क्रूर ग्रहों के वेध को देख के सुखयुक्त देश में प्रथम से कहना चाहिये ॥ ४१० ॥

वृक्षाणां जायते वृद्धिः स्वकाले फलपुष्पयोः ।
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं प्रजानां तत्र जायते ॥ ४११ ॥

जिस मण्डल में वृक्षों के फल तथा फूलों की वृद्धि अपने नियम से हो उस मण्डल में सुभिक्ष और प्रजा में क्षेम तथा आरोग्य होता है ॥ ४११ ॥

स्वचक्रे परचक्रं च न कदाचित्प्रजायते ।
बान्धवाः सुहृदस्तत्र शुभानां वेधसंभवे ॥ ४१२ ॥

अपने राज्य में किसी शत्रु की सेना कदापि नहीं आवे और बांधव भी परस्पर मित्र मित्र होके रहें, ऐसा फल शुभ ग्रहों के वेध से होता है सो भी पण्डितों को प्रथम से कहना चाहिये ॥ ४१२ ॥

चक्रावलोकप्रकरणम् ।

हिरण्यं नारिकेलं च पुष्पाक्षतमथो दलम् ।
दैवज्ञं पूजयेत् शक्त्या पश्चात्पृच्छेच्छुभाशुभम् ४१३

सुवर्णादि धन, वा नारियल आदि फल, वा गुलाबादि पुष्प, वा तन्दुलादि अक्षत, वा तुलसी आदि पत्र, इत्यादि में से अपनी सामर्थ्य के अनुसार समय पर जो वस्तु प्राप्त हो वह वस्तु गुप्त ज्योतिषाचार्यजी के भेट धरके फिर अपने कार्य का शुभाशुभ पूछे। किन्तु शुभ की इच्छा करनेवाला खाली हाथ से न पूछे ॥४१३॥

विना बलिं विना होमं कुमारीपूजनं विना ।
शुभग्रहं विना देवि चक्रराजं न वीक्षयेत् ॥४१४॥

पार्वती को श्रीशिवजी कहते हैं कि हे देवि ! दिक्पालादि देवताओं को विना बलि दिये, इष्ट देवता के मंत्र से विना हवन किये, कुमारी कन्या की विना पूजा किये और गोचर में विना शुभग्रहों के इस चक्रराज को अर्थात् अंश, तुंबरु तथा शतपदादि सम्पूर्ण चक्रों का राजा जो यह सर्वतोभद्र है इसको न देखे । क्योंकि—॥ ४१४ ॥

अधिवासनविधिः ।

इन्द्रादीन् पूजयेद्भक्त्या पूर्वाद्याशाष्टके क्रमात् ।
प्रणवाद्यैर्नमोऽन्तैश्च नाममंत्रैर्बलिं हरेत् ॥ ४१५ ॥

इन्द्रादि ८ दिक्पालों की उनके नाम के मंत्र से अपनी अपनी दिशा में पंचोपचार से पूजा करके बलि देवे । यथा पूर्वे ॐ इन्द्राय नमः, आग्नेय्यां ॐ अग्नये नमः, दक्षिणे ॐ यमाय नमः, नैर्ऋत्ये ॐ राक्षसाय नमः, पश्चिमे ॐ वरुणाय नमः, वायव्ये ॐ पवनाय नमः, उत्तरे ॐ कुबेराय नमः, ईशान्ये ॐ महेश्वराय नमः ॥ ४१५ ॥

अयुतं वा सहस्रं वा शतं चैकप्रमाणतः ।
कार्यमानेन जपः स्यात्तद्दशांशं च होमयेत् ॥४१६॥

प्रश्न करनेवाले के कार्य के अनुमान से ज्योतिषी को गुरु-दर्शित इष्ट के नाम के मंत्र का १० सहस्र वा १ सहस्र वा १ सौ जप करना फिर उस जप का दशांश अग्नि में घृतादि पदार्थों का हवन भी करना चाहिए ॥ ४१६ ॥

द्विरब्दादिदशाब्दान्तां कुमारीं परिपूजयेत् ।
स्वशक्त्या भोजयेत्पश्चात्क्षीराज्यगुडपायसैः ४१७॥

२ वर्षों के उपरान्त की और १० वर्षों के भीतर की अवस्था-वाली कुमारिकाओं को अपनी सामर्थ्य के अनुसार पूजा करे; फिर दूध, घृत तथा गुड़ (शर्करा) युक्त क्षीर का भोजन करावे ॥ ४१७ ॥

गोचरशुद्धिः ।

सर्वे लाभगता भव्या दिनेशस्त्रिषडभ्रगः ।
भौमार्किविक्रमारिस्था द्विनन्दाद्याद्रिगो गुरुः ४१८
जन्मे त्रिषष्ठद्युनभूसंस्थितः शुभदः शशी ।
द्युनपंचांत्यधर्मेषु बुधवर्ज्योऽन्यथा शुभः ॥ ४१९ ॥
षट्कर्मसप्तगः शुक्रस्त्याज्योऽन्यत्रगतः शुभः ।
राहुस्त्रिषष्ठगो भव्यो ज्ञेयः केतुश्च राहुवत् ॥ ४२०॥

जन्मराशि से ११ वीं राशि में सूर्यादि सर्व ग्रह, तथा ३।६।१० में सूर्य, ३ । ६ में मंगल, ३ । ६ में शनि, २ । ९ । ५ । ७ में बृहस्पति, ३ । ६ । ७ । १ में चन्द्र, ७ । ५ । १२ । ९ इनको छोड़ के शेष १ । २ । ३ । ४ । ६ । ८ । १० । ११ में बुध, ६ । १० । ७ इनको छोड़ के शेष १ । २ । ३ । ४ । ५ । ८ । ९ । १२ में शुक्र, ३ । ६ में राहु और ३ । ६ में केतु गोचर में शुभ

फलदायक होते हैं। गोचर में नाम राशि की अपेक्षा जन्मराशि की प्रधानता है ॥ ४१८ । ४२० ॥

अविचार्यतया पृच्छेत् पृच्छकः कथकस्तथा ।
द्वाविमौ विघ्नदौ प्रोक्तावत्र देवि ! न संशयः ॥४२१॥

हे पार्वति ! पूर्वोक्त विधि के बिना जो कोई इस चक्र में वेध फल देखने का प्रश्न करे तो प्रश्न करनेवाले को और वेधफल कहे तो कहनेवाले को इन दोनों ही को निश्चय विघ्न होता है ॥ ४२१ ॥

चक्रप्रशंसाप्रकरणम् ।

त्रीन्कालांस्त्रिषु लोकेषु यस्माद्बुद्धिः प्रकाशते ।
तत्र लोक्यप्रदीपाख्यं चक्रमत्र प्रकाश्यते ॥ ४२२ ॥

तीन काल (भूत, भविष्य और वर्तमान) में तथा तीन लोक (स्वर्ग, मृत्यु और पाताल) का जिस बुद्धि से प्रकाश होता है, उस बुद्धि का प्रकाश इस चक्र से होता है; अतः इस चक्र को त्रैलोक्य का दीपक कहा है। क्योंकि—॥ ४२२ ॥

दीपो यथा गृहस्यान्तरुद्द्योतयति सर्वतः ।
तथेदं सर्वतोभद्रचक्रं ज्ञानप्रकाशकम् ॥ ४२३ ॥

जैसे घर के भीतर दीपक प्रकाश करता है वैसे ही यह सर्वतोभद्रचक्र त्रिकाल में त्रैलोक्य के ज्ञान का प्रकाश करता है ॥४२३॥

एकाशीतिपदं चक्रं ज्योतिषं सारसंग्रहम् ।
ये जानन्ति जना दक्षास्ते स्तोकाः संति भूतले ४२४॥

परमदयालु श्रीशिवजी ने समुद्र को घड़े में भर देने की भाँति सम्पूर्ण ज्योतिषशास्त्र का सार इस ८१ कोठों के अखंड चक्र में भरा है; जिसको यथावत् गुरुमुख से जाननेवाले विचक्षण पुरुष इस पृथ्वी

पर दुर्लभ हैं अर्थात् खोज करने से भी बहुत थोड़े मिलते हैं। अतः मुझको अधिक परिश्रम करना पड़ा ॥ ४२४ ॥

विभ्रान्ता बहवो देशा गुरवो बहवः कृताः।
ज्योतिषस्तत्त्वज्ञानाय जीर्णशास्त्रे श्रमः कृतः ४२५॥

अतः उस ज्ञान के तत्त्व को जानने के वास्ते मैं बहुत से देशों में फिरा तथा इस विद्या के जाननेवाले बहुत से गुरु किये और ज्योतिष के प्राचीन शास्त्रों में भी बहुत सा श्रम किया तब गुरुकृपा से इसका अणुमात्र ज्ञान प्राप्त हुआ है ॥ ४२५ ॥

विस्तरेण मयाख्यातं यथोक्तं ब्रह्मयामले।
न देयं यस्य कस्यापि चक्रमेतत्सुनिश्चितम् ॥४२६॥

जिस सर्वतोभद्रचक्र का विधान जैसा ब्रह्मयामल ग्रन्थ में कहा है, वैसा मैंने (पं० नरपति ने) विस्तार से कहा। परन्तु ये श्रेष्ठचक्र निश्चय करके ऐसे वैसे मनुष्य को (कुपात्र शिष्य को) देना योग्य नहीं। क्योंकि—॥ ४२६ ॥

कुपात्रदानतो पापं पुण्यं सत्पात्रदानतः।
तस्मात् परीक्ष्य दातव्यं नोपहासस्तथा भवेत् ४२७॥

कुपात्र शिष्य को देने से पाप और सुपात्र शिष्य को देने से पुण्य होता है। अतः भली प्रकार से शिष्य की परीक्षा करके विद्या के तत्त्व का दान करे। ऐसा विचार न करने से उलटा गुरु का उपहास (ठट्ठा) होता है ॥ ४२७ ॥

भारद्वाजकुलारविन्दतरणिर्माध्यन्दिनीयो द्विजो
नानाशास्त्रविचारमग्नहृदयो व्यासावटंकांकितः।
वास्तव्यो मरुमंडले सुविदिते पालीपुरे धार्मिका
जात्या पोष्करणो महीधरसुतः श्रीमिष्टलालाभिधः॥

इति श्रीमारवाड़देशस्थ जोधपुरराज्यान्तर्गत पालीनगरनिवासि पुष्करण ज्ञातीय, भारद्वाज गोत्री, माध्यन्दिनीयशाखाध्यायी—शुक्ल यजुर्वेदी, टङ्कशलावटंक व्यासपदाधिकारी, श्रीमान् महीधरशर्मणः पुत्र, ज्योतिः आदि नानाशास्त्रस्य तत्त्वविचारकरणे सदामग्नहृदय, प्राचीन ज्योतिःशास्त्रश्रमी दैवज्ञभूषण, ज्योतिः रत्न—आदि पण्डित मीठालालव्याससंगृहीत बृहदर्घमार्तंडनाम्नो महतो ग्रंथादुद्धृत सर्वतोभद्रचक्र (त्रैलोक्य दीपक) स्वकृत आर्य्यभाषाविवृतिव्याख्यासहितस्य प्रथमोऽङ्कः समाप्तः ॥ ४२८ ॥
